अनुबंध-II

उच्च शिक्षा के संबंध में नीतिगत परामर्श के लिए प्रकरण और प्रश्न

उच्च शिक्षा के संबंध में नीतिगत परामर्श के लिए प्रकरण और प्रश्न

I. के लिए अभिशासन में सुधार
II. गुणवत्ता संस्थानों की रैंकिंग और प्रत्यायन
III. विनियमन की गुणवत्ता बेहतर बनाना
IV. केन्द्रीय संस्थानों की गति निर्धारक भूमिका
V. राज्य सार्वजनिक विश्वविद्यालयों को बेहतर बनाना
VI. उच्च शिक्षा में कौशल विकास को शामिल करना
VII. मुक्त तथा दूरस्थ शिक्षा और ऑनलाइन पाठ्यक्रमों का संवर्धन
VIII. प्रौद्योगिकी समर्थित शिक्षा के अवसर
IX. क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करना
X. जेन्डर और सामाजिक अंतरालों को पाटना
XI. उच्च शिक्षा को समाज से जोड़ना
XII. सर्वोत्तम अध्यापक तैयार करना
XIII. छात्र सहयोग प्रणालियों को बनाए रखना
XIV. भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक एकीकरण को बढ़ावा देना
XV. निजी क्षेत्र के साथ सार्थक भागीदारी
XVI. उच्च शिक्षा का वित्तपोषण
XVII. उच्च शिक्षा का अन्तर्राष्ट्रीयकरण
XVIII. शिक्षा को नियोजनीयता से जोड़ने के लिए उद्योगजगत से संपर्क स्थापित करना
XIX. अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देना
XX. नया ज्ञान

I. गुणवत्ता के लिए अभिशासन में सुधार

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता संबंधी आश्वासन को आज नीतिगत कार्यसूची में सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। माध्यमिक शिक्षा के बाद की शिक्षा में ऐसे स्नातक तैयार करने की आवश्यकता है, जो नए कौशल से युक्त हों, जिनका ज्ञान आधार व्यापक हो और जिन्हें कई प्रकार की दक्षता हासिल हो ताकि वे और अधिक जटिल तथा परस्पर-आश्रित दुनिया में अपने कदम जमा सकें। गुणवत्ता एक बहु-आयामी अवधारणा है और व्यक्तिगत तथा संस्थागत स्तर पर गुणवत्ता संबंधी आश्वासन और प्रबंधन के लिए अनेक तंत्रों की आवश्यकता है। गुणवत्ता बनाए रखने तथा इसे बेहतर बनाने की प्रक्रिया के लिए मजबूत नियामक तंत्र वाली जवाबदेही और प्रत्यायन प्रणालियां अत्यावश्यक हैं। उच्च शिक्षण संस्थानों और अनुसंधान एवं वैज्ञानिक तथा तकनीकी संस्थानों में मानकों का समन्वय और निर्धारण करना केन्द्र सरकार का संवैधानिक दायित्व है। गुणवत्ता से संबंधित आंतरिक प्रक्रियाओं को संस्थागत रूप देने के लिए सभी हितधारकों को शामिल करना आवश्यक है क्योंकि केवल उत्कृष्टता ही, बड़े पैमाने पर उच्च शिक्षा की आवश्यकता को पूरा नहीं कर सकती। गुणवत्ता सभी संस्थानों के लिए चिंता का विषय होना चाहिए और अच्छी गुणवत्ता वाले संस्थानों तथा उपयुक्त प्रशासन अवसंरचनाओं से ही उत्कृष्टता का प्रवाह होगा। भारत में उच्च शिक्षा में क्षेत्रीय विविधता के साथ अभूतपूर्व विस्तार हुआ है। इस क्षेत्र के अनियोजित विस्तार ने गुणवत्ता बेहतर बनाने और इसे बनाए रखने के लिए चुनौतियां खड़ी कर दी हैं।

देश ने बाह्य गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए 1990 के दशक में बाह्य गुणवत्ता आश्वासन संस्थाओं की स्थापना की है। सामान्य उच्च शिक्षण विश्वविद्यालयों और संस्थानों को मान्यता देने के लिए यूजीसी ने 1994 में राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद (एनएएसी) का गठन किया था और कार्यक्रमों तथा संस्थानों को मान्यता देने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) ने 1994 में राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड (एनबीए) की स्थापना की थी। एनएएसी संस्थानों को मान्यता प्रदान करती है और सात मानदंडों के आधार पर संस्थान की शैक्षिक गुणवत्ता के लिए प्रमाणित करती है। विनियामक अवसंरचना से लेकर संस्थागत स्तर तक उच्च शिक्षा के संपूर्ण क्षेत्र में सुधार करने की सख्त जरूरत है। सुधार कार्यसूची के कुछ संभव प्रस्ताव निम्नलिखित हैं जिन पर विचार किया जा सकता है:

- उच्च शिक्षण संस्थानो में गुणवत्ता की कमी से निपटने के लिए स्वतंत्र गुणवत्ता आश्वासन फ्रेमवर्क बनाना। आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ठ (आईक्यूएसी) की स्थापना करना ऐसा ही एक तंत्र है जिससे संस्थागत फ्रेमवर्क के तहत गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकती है और इसे गुणवत्ता आश्वासन एजेंसियों द्वारा निर्धारित मानदण्डों से जोड़ा जा सकता है।
- मौजूदा नियामक निकायों का पुनर्गठन और उनकी बहुतायत पर युक्तिसंगत तरीके से फिर से विचार करना।
- संस्थानों की स्वायत्तता: नियामक काम-काज को फिर से इस तरह सुयोजित करना कि संस्थाओं की स्वायत्तता को बढ़ावा मिले। यह दृष्टिकोण दर्शाता है कि हमने विनियमन की बजाय सरलीकरण के बदलाव को अपनाया है; अनुदानों और भुगतान के लिए एकल बिंदु अनुमति; वैश्विक गुणवत्ता वाली

संस्थाओं को प्रोत्साहन। संस्थानों की स्वायत्तता, कॉलेजों को डिग्री देने का अधिकार और स्वायत्त दर्जा प्रदान करके भी प्राप्त कर ली जाएगी।

- छात्रों की हॉरीज़ोन्टल और वर्टिकल मोबिलिटी सुनिश्चित करने के लिए हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि एक फ्रेमवर्क के जरिए पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या में एकरूपता है; सभी संस्थानों ने विकल्प आधारित क्रेडिट प्रणाली (सीबीसीएस) अपनाई है।
- प्रवेश और पात्रता परीक्षाओं की बहुलता के मुद्दे पर फिर से विचार करने की आवश्यकता है और एकल राष्ट्रीय परीक्षण की संभावना तलाशी जाए। क्या इस प्रयोजनार्थ हमारे पास नेशनल टैस्टिंग सर्विस हो सकती है, जिसे परामर्शों और वाद-विवाद के जरिए विकसित किया जा सके?
- सहयोग बढ़ाकर शिक्षा के उचित विनियमन और अन्तर्राष्ट्रीयकरण के लिए भारत में विदेशी शिक्षा प्रदाताओं को अनुमति देना।
- उच्च शिक्षा का, आवस्तविक मांग आधारित निरीक्षण शासित वित्तपोषण के बजाय मानक आधारित वित्तपोषण। यूजीसी वित्तपोषण हेतु केन्द्रीय तथा राज्य विश्वविद्यालयों और कॉलेजों तक निधियां पहुंचाने का मुख्य साधन है। अनुदानों के संवितरण की कार्यक्षमता को बेहतर बनाने के लिए मानक आधारित वित्तपोषण से संबंधित दृष्टिकोण अपनाए जाने पर विचार किया जा सकता है।
- राज्य विश्वविद्यालय और उनसे संबद्ध कॉलेज, जिनमें 90 प्रतिशत से अधिक छात्र नामांकित हैं, निधियों की कमी और खराब गुणवत्ता के परिणामस्वरूप खराब अभिशासन संबंधी गंभीर समस्याओं से जूझ रहे हैं।
- केंद्रीय शिक्षण संस्थानों के लिए और अधिक स्वायत्तता।
- उच्च शिक्षा के क्षेत्र से संबंधित सभी विवादों पर त्वरित न्याय के लिए शैक्षिक न्यायाधिकरण बनाने की आवश्यकता।
- कदाचारों का निषेध और रोकथाम ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दाखिला प्रक्रिया में केवल योग्यता की ही अहम भूमिका हो। कैपिटेशन फीस और भ्रामक विज्ञापनों पर सख्त कार्रवाई की जाए।

विचार-विमर्श के लिए प्रश्न

- निम्नलिखित में से कौन-से सुधार राज्य विश्वविद्यालयों को बेहतर अभिशासन अवसंरचना प्रदान करेंगे
    - संबद्ध करने की प्रणाली में सुधार
    - बहु-हितधारक शासी निकाय सुनिश्चित करना
    - विभिन्न शासी निकायों की भूमिका स्पष्ट रूप से निर्धारित करना
    - पारदर्शिता के जरिए अधिक से अधिक जवाबदेही
    - अधिक से अधिक शैक्षणिक, प्रशासनिक और वित्तीय स्वायत्तता
    - संगठनों की, उन छात्रों से उचित शुल्क वहन करने की क्षमता जो भुगतान करने में समर्थ हैं और साथ ही जरूरतमंद बच्चों की जरूरतें पूरी करने के लिए एक अप्रत्यक्ष व्यवस्था।

- निम्नलिखित में से कौन-से सुधार केन्द्रीय रूप से वित्तपोषित संस्थाओं को बेहतर अभिशासन अवसंरचना प्रदान करेंगे
    - शासी निकायों के संघटन में परिवर्तन जैसे कि स्थानीय प्रतिनिधि, उद्योग, एलुमिनी और नागरिक समाज इत्यादि को शामिल करना।
    - नियामक काम-काज को फिर से सुयोजित बनाना ताकि संस्थाओं की स्वायत्तता को जिम्मेदारी तय करते हुए बढ़ावा दिया जा सके
    - एकल सर्व-निहित नियामक प्राधिकरण

- क्या सार्वजनिक वित्तपोषित उच्च शिक्षण संस्थानों का मानकों और परिणाम के आधार पर वित्तपोषण वांछनीय है? यदि नहीं, तो क्यों और यदि हां, तो क्यों?
- आंतरिक मूल्यांकन और प्रत्यायन कार्य के लिए आईक्यूएसी को सशक्त बनाने के लिए क्या किया जा सकता है?
- विशेष रूप से योग्य संकाय को आकर्षित करने, भर्ती करने और बनाए रखने तथा साथ ही समानता को ध्यान में रखने के लिए क्या संस्थागत उपाय करने की आवश्यकता है?
- उन अध्यापकों का क्या किया जाना चाहिए जो पढ़ाते नहीं हैं?
  हटाया जाए ..... स्थानांतरण..... काउंसलिंग.....
  यदि उन्हें हटाया जाए तो क्या आप इसका समर्थन करेंगे?
- क्या कॉलेज के प्रधानाचार्य और शासी निकाय को व्यय की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए और उन्हें इसके लिए जबावदेह बनाया जाना चाहिए?
- क्या विश्वविद्यालय अधिनियम में परिवर्तन किया जाना चाहिए?
- क्या कुलपति की नियुक्ति खोज एवं चयन समिति पर आधारित होनी चाहिए?
- क्या संकाय नियुक्ति समिति में मूल्यांकक के रूप में तीसरे पक्ष की उपस्थिति होनी चाहिए जो केवल कार्यवाही को देखेगा और रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।
- क्या फीस बढ़ाकर 500 रु. प्रतिमाह कर दी जानी चाहिए जब व्यय 2000 रु. प्रतिव्यक्ति से अधिक हो। यह जरूरतमंद छात्रों के लिए छूट के साथ करना चाहिए।
- क्या शासी निकाय को एकत्रित फीस के संबंध में व्यय पर निर्णय लेने के लिए अधिकार दिए जाने चाहिए?
- क्या कॉलेजों को प्रशासनिक एवं वित्तीय रूप से स्वायत्त होना चाहिए?
- क्या कॉलेजों को अपने पाठ्यक्रम कार्य तैयार करने की अनुमति दी जानी चाहिए (प्रत्यायित)।
- क्या अध्यापकों की पांच वर्ष की परीविक्षा की अवधि होनी चाहिए?

II: संस्थाओं की रैंकिंग और प्रत्यायन

विश्वविद्यालयों की विश्व रैंकिंग, अनुसंधान और शिक्षण में संस्थागत निष्पादन के आकलन, संकाय सदस्यों की ख्याति, नियोक्ताओं के बीच ख्याति, संसाधन उपलब्धता, अंतर्राष्ट्रीय विद्यार्थियों की और क्रियाकलापों में सहभागिता आदि पर आधारित होती हैं। अधिकांश शीर्ष रैंकिंग वाली संस्थाएं, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूके में अवस्थित हैं।

विश्वविद्यालयों की विश्व रैंकिंग के शीर्ष 200 पोजीशन में भारतीय विश्वविद्यालयों का नाम नहीं है। यहां तक कि, भारत में शीर्ष रैंकिंग प्राप्त संस्थाएं भी, वैश्विक रैंकिंग में निचले स्थान पर हैं। टाईम्स उच्चतर शिक्षा रैंकिंग 2012-13 के अनुसार उच्च रैंक वाली भारतीय संस्थाएं, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़कपुर (234), भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुम्बई (258) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की (267) हैं। क्या इसका अर्थ यह है कि भारत में केवल निम्न गुणवत्ता वाली उच्चतर संस्थाएं ही हैं? भारत में प्रत्यायन एजेंसियों की स्थापना इस उद्देश्य से की गई थी कि उच्चतर शिक्षा के स्तर और गुणवत्ता में सुधार हो।

भारत ने, गुणवत्ता आश्वासन के एक उपाय के रूप में, 1994 में प्रत्यायन एजेंसियों की स्थापना की। उच्चतर शिक्षा संस्थाओं से यह अपेक्षा की गई थी कि वे अपनी संस्था या कार्यक्रम को प्रत्यायित कराने के लिए प्रत्यायन एजेंसियों से संपर्क करेंगी। प्रत्यायन स्वैच्छिक था और इसके परिणामस्वरूप केवल कुछ संस्थाओं ने ही संपर्क किया और प्रत्यायित हुईं । केवल 140 विश्वविद्यालयों (यूजीसी द्वारा मान्यता प्राप्त 164 में से) ने अपने को राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद (एनएएसी) द्वारा प्रत्यायित कराया है और उनमें से केवल 32 प्रतिशत को **ए** ग्रेड अथवा इससे अधिक के दर्जे में रखा गया है।

एनएएसी द्वारा, 4,870 कॉलेजों में से कुल 2,780 कॉलेजों को प्रत्यायित किया गया है और इनमें से केवल 9 प्रतिशत को ए अथवा इससे अधिक दर्जे में रखा गया है। प्रत्यायित संस्थाओं में से, 68 प्रतिशत विश्वविद्यालयों और 91 प्रतिशत कॉलेजों को, एनएएसी द्वारा विनिर्दिष्ट गुणवत्ता मानदंडों के संदर्भ में औसत या औसत से कम दर्जे में रखा गया है।

भारतीय उच्चतर शिक्षा पद्धति में विस्तार हुआ है तथा इसमें आगे और विस्तार होगा। यह उच्चतर शिक्षा के लिए बढ़ती हुई सामाजिक मांग के कारण हुआ है। लेकिन, इस विस्तार में ज्यादातर शेयर निजी संस्थाओं का है। इन संस्थाओं में सुविधाओं और शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की गुणवतता बेहद असंतोषजनक है। विशेष रूप से निजी उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में तेजी से वृद्धि होने के परिप्रेक्ष्य में संस्थाओं का आकलन और प्रत्यायन महत्वपूर्ण है ताकि उच्चतर शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सके।

एनएएसी एक निर्धारित समय-सीमा में आकलन और प्रत्यायन शीघ्रता से पूरा कर सके इसके लिए प्रभावी तरीके और कार्यनीतियां आवश्यक हैं। यूजीसी से निधियन सहायता प्राप्त करने के लिए उच्चतर शिक्षा संस्थाओं के लिए प्रत्यायन को अब, अनिवार्य बना दिया गया है। यद्यपि यह एक सकारात्मक कदम है, अल्प-अवधि में बहुत बड़ी संख्या में संस्थाओं को प्रत्यायित करने का मुद्दा, प्रत्यायन एजेंसियों के लिए चुनौती है। कुछ राज्य सरकारों, विशेषत: राज्य उच्चतर शिक्षा परिषदों ने स्वयं अपनी प्रत्यायन यूनिटें स्थापित की हैं। प्रत्यायन की प्रक्रिया को विकेन्द्रीकृत करने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है। उच्चतर शिक्षा संस्थाओं ने आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ठ भी स्थापित किए हैं। उनकी कार्य-पद्धति और संस्थाओं के समग्र गुणवत्ता सुधार पर इसके प्रभाव का अभी आकलन किया जाना है। रैंकिंग और प्रत्यायन से संबंधित मुद्दों ने विचार-विमर्श के लिए कई प्रश्न उठाए हैं।

विचार-विमर्श के लिए प्रश्न

- विश्व रैंकिंग में देश के स्थान में सुधार लाने के लिए क्या भारत को अपने संसाधन शोध विश्वविद्यालयों, लिबरल आर्ट्स और सामाजिक विज्ञान पर केन्द्रित करने चाहिए?
- क्या भारत को, भारतीय परिस्थिति के और अधिक अनुकूल संकेतकों के आधार पर स्वयं अपनी रैंकिंग पद्धति तैयार करनी चाहिए चूंकि अन्य रैंकिग प्रणालियों में परिकल्पना/विषयगत कारकों के लिए काफी महत्व दिया जाता है जिसमें भारतीय विश्वविद्यालय हानि उठाते हैं।
- क्या सभी संस्थाओं (चाहे संस्था सार्वजनिक रूप से वित्त-पोषित है या नहीं) के लिए प्रत्यायन को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए? क्या यह दृष्टिकोण सही है अथवा नहीं।
- हम प्रत्यायन की प्रक्रिया को किस प्रकार सुकर बना सकते हैं ताकि प्रक्रिया को वस्तुपरक रूप से और अधिक व्यावहारिक तथा पारदर्शी बनाया जा सके?
- क्या हमें, कार्यक्रम प्रत्यायन या संस्थागत प्रत्यायन या दोनों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

III: विनियमन की गुणवत्ता में सुधार लाना

उच्चतर शिक्षा में विनियमन का मुख्य उद्देश्य, बारहवीं पंचवर्षीय योजना में यथा उल्लिखित समता, विस्तार और उत्कृष्टता के तीन उद्देश्यों को पूरा करना है। भारत में विनियामकों की बहुतायत है और उच्चतर शिक्षा, तकनीकी शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा के लिए पृथक विनियामक है। तथापि,यह महसूस किया गया है कि एक एकल विनियामक संस्था ज्यादा कारगर होगी, क्योंकि विनियमों की बजाय जो प्राय: विनियमों के कार्यान्वयन ज्यादा समस्या पैदा करता है।

अभिशासन की गुणवत्ता का मुद्दा, संस्थाओं द्वारा उपयोग की जा रही स्वायत्ता के मुद्दे से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। उच्चतर शिक्षा संबंधी प्रथम आयोग (1948 में राधाकृष्णन आयोग) के समय ही विश्वविद्यालयों को और अधिक स्वायत्तता प्रदान करने और इनके अभिशासन और प्रबंधन में सरकारी हस्तक्षेप को कम करने के लिए ठोस तर्क दिये जाते रहे हैं। उच्चतर शिक्षा संबंधी आयोगों ने विश्वविद्यालयों के विधायी फ्रेमवर्क और एक सशक्त शासी निकाय, जिसमें बाहरी सदस्यों को शामिल किया जाए, पर जोर दिया था और कहा था कि विश्वविद्यालयों को "दखल से मुक्त" रखा जाए। विश्वविद्यालयों से अपेक्षा की गई थी कि वे एक स्व-विनियामक संस्थाओं की तरह रहेंगी और यूजीसी द्वारा निर्धारित मानकों का स्वैच्छिक रूप से अनुपालन करेंगी।

सरकार की, अधिकार और नियंत्रण की भूमिका को बदलते हुए इसे आकलन कर्ता और संचालन की भूमिका में बदल कर संस्थागत स्वायत्तता को सहज बनाने की आवश्यकता है। इस परिदृश्य में, उच्चतर शिक्षा प्रणाली की क्षमता में वृद्धि करने की आवश्यकता है ताकि समन्वित विनियामक सुधारों के माध्यम से यह स्वयं-अभिशासन कर सके। तथापि, उच्चतर शिक्षा के कुछ क्षेत्रों जैसे प्रवेश की अनुमति देना, विद्यार्थियों की संख्या और पाठ्यक्रमों को शुरू करने के संबंध में संचालन निर्णय लेने के अनुमति, अभिशासन और प्रबंधन तथा विद्यार्थी अधिगम के स्तर से संबंधित मुद्दों की समग्र निष्पादन की मॉनीटरिंग में विनियमन की आवश्यकता होती है। साथ ही सार्वजनिक और निजी संस्थाओं में और अधिक पारदर्शिता अपेक्षित है। जिसमें उनसे यह अपेक्षित है कि वे दाखिलों, शुल्कों, संकाय, कार्यक्रमों, नियोजनों, अभिशासन, वित्त, व्यवसाय संबंधों और स्वामित्व से संबंधित महत्वपूर्ण मानकीकृत सूचनाएं नहीं छुपाएंगे।

जैसे-जैसे हम एक विशिष्ट ढांचे से एक जन-साधारण ढांचे की ओर अग्रसर होते हैं, हम निजी उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में तीव्र वृद्धि पाते हैं। इनमें से कुछ विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में समुचित अवसंरचना और संकाय संख्या का अभाव है और शैक्षणिक स्तर खराब है और ये विद्यार्थियों से अत्यधिक शुल्क लेते हैं। तथापि, यह सुनिश्चित करने के लिए कि निजी संस्थाएं, गुणवत्ता, समता और पारदर्शिता के लिए प्रतिबद्ध रहें, विनियामकों के माध्यम से कदम उठाने की आवश्यकता होती है। वर्तमान विनियामक फ्रेमवर्क को पुन: तैयार करने की आवश्यकता है ताकि: (i) उच्च-गुणवत्तापरक शिक्षा हेतु नव-परिवर्तन लाने और उपलब्ध कराने के लिए परोपकार के इरादे से निजी निवेश को प्रोत्साहन दिया जा सके। (ii)

जनता को निजी संस्थाओं के संबंध में सूचना की बेहतर उपलब्धता को बढ़ावा दिया जा सके; (iii) यह सुनिश्चित किया जा सके कि उन संस्थाओं पर तुरन्त कार्रवाई की जाए जो अनुचित कार्यों में लिप्त हैं। प्रत्यायन की पद्धति ऐसे सुधारों के लिए महत्वपूर्ण होगी और इसे समयबद्ध रूप से पारदर्शी और कार्यशील बनाए जाने की आवश्यकता है।

छत्तीसगढ़ में 2005 का निर्णय, जिसमें 117 निजी विश्वविद्यालयों को बंद करने का आदेश दिया गया था, क्योंकि वे यूजीसी द्वारा 2003 में निर्धारित किए गए विनियामकों का अनुपालन नहीं कर रहे थे, जैसे मामले भी हुए हैं। हाल ही में व्यक्तिगत रूप से निरीक्षण के बाद 41 समवत् विश्वविद्यालयों का समवत् दर्जा वापस ले लिया गया था क्योंकि उनमें उन अवसंरचना सुविधाओं की कमी थी जो गुणवत्तापरक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए अपेक्षित होती है।

संबद्ध करने की प्रणाली में भी सुधार लाने की आवश्यकता है क्योंकि अधिकांश अध्यापन, संबद्ध कॉलेजों में होता है। संस्थागत सुधारों की आवश्यकता है जिसके द्वारा संबद्ध विश्वविद्यालयों से अपेक्षित होगा है कि वे पुन: अपनी कॉलेज विकास परिषदें तैयार करें और अपने कॉलेजों को सभी शैक्षणिक, प्रशासनिक और वित्तीय मामलों में और अधिक स्वायत्तता प्रदान करें।

विचार-विमर्श के लिए प्रश्न

- क्या विनियमन की मौजूदा प्रणाली ने हमारी संस्थाओं के विकास का मार्ग अवरुद्ध कर दिया है? क्या यह बेहतर होगा कि विनियामक संस्थाओं की संख्या में कमी की जाए और/अथवा उन्हें फिर से गठित किया जाए ताकि वे प्रभावी रूप से कार्य कर सके। कृपया विस्तारपूर्वक जांच करें।
- हम उच्चतर शिक्षा की संस्थाओं को स्वायत्तता प्रदान करते हुए किस प्रकार जबावदेही के उपाय सुनिश्चित करेंगे?
- क्या मौजूदा विनियम पर्याप्त हैं और विनियमों को किस प्रकार लागू किया जा सकता है?
- विनियामक संस्थाओं को कितनी स्वायत्तता मिलनी चाहिए?
- क्या प्रत्यायन प्रदात्ताओं द्वारा निरीक्षण कार्यों को बंद कर देना चाहिए?
- क्या प्रत्यायन के लिए तंत्र को ऑनलाइन रखा जाना चाहिए और यह निर्धारित करने के लिए नियमित रूप से वीडियोग्राफी साक्ष्य रखे जाने चाहिए कि किस संस्था को क्या रैंकिंग दी गई है?
- निजी क्षेत्र द्वारा शिक्षा क्षेत्र को क्या विरोधाभास/चुनौतियां दी गई हैं जो शिक्षा को छात्रों तथा शिक्षाविदों के मूल्य पर एक लाभ कमाने वाले उद्यम के रूप में परिवर्तित कर रहे हैं।

IV: केंद्रीय संस्थाओं की गति निर्धारक भूमिकाएं

केंद्रीय संस्थाओं/केंद्रीय विश्वविद्यालयों को सामाजिक परिवर्तन और विकास की प्रक्रियाओं में एक प्रमुख संस्था के रूप में जाना जाता है। सबसे अधिक स्पष्ट भूमिका जो उन्हें निभानी होती हैं वह अनुसंधान और उच्च कौशल प्राप्त कार्मिकों को तैयार करने की है ताकि उत्पादन क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। इस महत्वूपर्ण भूमिका के कारण उन्हें नागरिक समाज की नई संस्थाओं का निर्माण करने, नए सांस्कृतिक मूल्यों को प्रोत्साहित करने और सहज बनाने तथा नव-सामाजिक संभ्रातों के प्रशिक्षण और समाजीकरण में उनकी भूमिका से दूर नहीं रखा जाना चाहिए।

केंद्रीय विश्वविद्यालय स्थायी और सतत् संस्थाएं होते हैं। इन्हें बुद्धिमतापूर्वक डिजायन, अभिशासित और वित्त-पोषित किया जाना अपेक्षित होता है ताकि हमारी वैश्विक छवि और प्रतिस्पर्धात्मकता को बनाए रखा जा सके। इन संस्थाओं का उत्तरदायित्व होता है कि वे बौद्धिक सम्मिश्रण के अनुसरण में, परंपरागत विषयक बाधाओं से आगे निकलें और शैक्षिक उपक्रम उद्यम और ज्ञान उद्यमशीलता की संस्कृति का निर्माण करें। उन्हें इस तरीके से तैयार किया जाना चाहिएकि वे छात्र ऐसे तरीके और स्तर की उच्च शिक्षा प्रदानकरें जो इन विश्वविद्यालयों को एक विशेष दर्जा प्रदानकरे और यह दर्जा उनकी आगामी नई कक्षा की अनन्यता अथवा गुणवत्ता की बजाय उनकी उपलब्धि के प्रतिफल तथा प्रभाव की व्यापकता पर आधारित हो।

केंद्रीय विश्वविद्यालयों को शैक्षिक पोषक की भूमिका निभानी चाहिए, जो उस श्रेणी के युवा उदीयमान शिक्षा-शास्त्रियों और वैज्ञानिकों का विकास और निर्माण करेंगें, जिनकी अत्यधिक मांग है। केंद्रीय विश्वविद्यालय अपने आगम क्षेत्र में तीन विभिन्न स्तरों: (क) कनिष्ठ शैक्षिक इनक्युबरेटर्स (ख) वरिष्ठ शैक्षणिक इनक्युबरेटर्स और (ग) उच्चतर शैक्षणिक इनक्युबरेटर्स खोले। कनिष्ठ, वरिष्ठ और उच्च शैक्षणिक इनक्युबरेटर्स, क्रमश: पहली से आठवीं कक्षा नवीं से बारहवीं कक्षा, स्तर और यूजी/पीजी के विद्यार्थियों के बीच ज्ञान और शोध अभिमुखी प्रवृत्ति को श्रेष्ठतर बनाने के लिए उत्तरदायी होंगे।

देश के केंद्रीय विश्वविद्यालयों को विशिष्ट लक्ष्य दिए जा सकते हैं जिन्हें शोध और शिक्षण की राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के फ्रेमवर्क के भीतर प्राप्त किया जाना होगा ताकि देश में क्षेत्रीय विकास को सुकर बनाने के लिए विशेषज्ञ तैयार किए जा सकें। इसी प्रकार, केंद्रीय विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों को जूनियर और इंटरमीडिएट स्तर पर सप्ताह/पखवाड़े में एक बार विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करने का कार्य दिया जाना चाहिए, ताकि विद्यार्थियों को महत्वपूर्ण शैक्षणिक कार्य के लिए प्रोत्साहित किया जा सके।

विचार-विमर्श हेतु प्रश्न

- केन्द्रीय विश्वविद्यालय किस प्रकार निर्धारक भूमिका निभा पाएंगे?
- इन संस्थाओं को उत्कृष्टता केन्द्रों में परिवर्तित करने हेतु क्या कदम उठाने आवश्यक हैं?

- क्षेत्रीय स्तर के विकास प्रयासों के समर्थन हेतु किस प्रकार स्वायत्त और संस्थागत स्तरीय पहलों को प्रोत्साहित किया जाए?
- सीएफआई अपने स्थानीय क्षेत्रों में और उनके आस-पास शैक्षिक संस्थाओं को सहयोग के लिए किस प्रकार एकजुट कर सकते हैं?
- अकादमिक उत्कृष्टता के प्रोत्साहन और प्रचार हेतु सीएफआई किस प्रकार सहायता कर सकते हैं, इसके लिए सुझाव दें।
- सीएफआई अपने क्षेत्रों में उच्च शिक्षा के लिए किस प्रकार सहायता कर सकते हैं, इसके लिए सुझाव दें।
- क्या केंद्रीय संस्थाओं को उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए नजदीक के समुदाय और स्कूलों के साथ जोड़ा जाना चाहिए।
- क्या उनके कार्य तथा शिक्षण एवं शोध की गुणवत्ता को समुदाय के साथ जोड़ा जाना चाहिए?
- वित्तीय सत्यनिष्ठा एवं प्रशासनिक एवं शैक्षिक उत्कृष्टता सुनिश्चित करने के लिए हम सीएफआई के लिए निष्पादन मानक कैंसे निर्धारित करेंगे?
- हम केंद्रीय विश्वविद्यालयों में जीईआर में 2% के वर्तमान स्तर से 10% तक की वृद्धि कैंसे करेंगे?

V सार्वजनिक राज्य विश्वविद्यालयों में सुधार करना

देश में राज्य सार्वजनिक उच्चतर शिक्षा प्रणाली पर विचार-विमर्श होते रहे हैं और उनमें बदलाव, पुन: संरचना और सुधार की सख्त जरूरत को स्वीकार किया गया है। इन मुद्दों में राज्य सार्वजनिक विश्वविद्यालयों में उप कुलपतियों की नियुक्ति से लेकर, इन्हें सम्बद्ध करने की प्रणाली और अभिशासन तक शामिल हैं। विश्वविद्यालयों में नौकरशाही का बोलबाला है। शिक्षकों की बेहद कमी है और इन्हें तदर्थ रूप से नियुक्त किया जाता है। ऐसे शिक्षक उन्हें किए जाने वाले तुच्छ भुगतान से शिक्षण और अनुसंधान करने में असमर्थ हैं। ये विश्वविद्यालय निर्णय लेने में स्वतंत्र नहीं हैं राज्य सार्वजनिक विश्वविद्यालयों पर थोपे गए विनियम और सभी अकादमिक सुधार एजेण्डा या तो उन पर भार-स्वरूप हैं अथवा इनकी उचित मानीटरिंग नहीं की जाती है। गुणवत्ता में सुधार के लिए विश्वविद्यालयों और कालेजों के प्रत्यायन की प्रणाली है, इसके बावजूद सार्वजनिक उच्चतर शिक्षा पर इसका कोई खास प्रभव नज़र नहीं आता।

राज्य सार्वजनिक विश्विद्यालयों में सार्वजनिक संसाधनों की कमी है और इसके कारण स्व-वित्तपोषित पाठ्यक्रमों का प्रसार हुआ है। निसंदेह सार्वजनिक विश्वविद्यालय प्रणाली के कुछ कालेज उच्च अकादमिक मानक रखते हैं, तब भी ग्रामीण और अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में अब भी कुछ कालेज ऐसे हैं जो पिछड़ रहे हैं। कालेजों की कुशलता और कार्य प्रणाली में सुधार हेतु कोई व्यवस्थागत सोच नहीं है। राजनीतिकरण बहुत अधिक है और कारपोरेट में कार्य करने की इच्छा रखने वालों के लिए यह अनाकर्षक गंतव्य बन गया है।

सार्वजनिक विश्वविद्यालयों में शोध स्तर अत्यंत निम्न है। इन विश्वविद्यालयों द्वारा दिए जाने वाले डाक्टोरेट बेहद निम्न गुणवत्ता के हैं। शिक्षकों को भी अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के अवसर नहीं मिलते।

हाल ही के वर्षों में राज्य में निजी विश्वविद्यालयों का प्रसार भी हुआ है और निजी विश्वविद्यालयों में मानकों के अनुरक्षण हेतु कोई मजबूत तंत्र नहीं है।

इसलिए राज्य सार्वजनिक विश्वविद्यालयों और कालेजों में व्यवस्थागत सुधारों पर विचार करने की आवश्यकता है। जिन मुद्दों पर विचार किया जाना है वे हैं : (क) विश्वविद्यालयों में उप कुलपतियों की नियुक्ति; (ख) कुछ राज्य विश्वविद्यालयों से संबद्ध कालेजों की संख्या; (ग) राज्य सार्वजनिक विश्वविद्यालयों और कालेजों का वित्तपोषण; (घ) शिक्षण और अनुसंधान के मानकों को प्रोत्साहन; (ड.) शिक्षकों की भर्ती की प्रक्रिया।

विचार-विमर्श हेतु प्रश्न

- अवसरंचना, अकादमिक सहयोग और अर्हता-प्राप्त शिक्षकों के प्रावधान के संबंध में राज्य विश्विद्यालयों को किसी प्रकार सुदृढ़ किया जा सकता है?

- राज्य विश्वविद्यालयों में पढ़ाने वाले संकाय सदस्यों में अनुसंधान को किस प्रकार प्रोत्साहित किया जा सकता है?
- क्या संबद्ध कालेजों की संख्या के आधार पर विश्वविद्यालयों के संबंध में निर्णय लेना एक अच्छा विचार होगा?
- क्या पारदर्शी और प्रतिस्पर्धी नियुक्ति प्रक्रिया राज्य विश्वविद्यालयों की सहायता करेगी?
- क्या कॉलेजों को स्वायतता प्रदान करना बेहतर होगा?
- क्या यह वांछनीय है कि मासिक फीस जरूरतमंद छात्रों के लिए छूट प्रदान करते हुए बढ़ा दी जाए?
- क्या शासी निकाय को एकत्रित फीस के संबंध में व्यय और उसे कारपस निधि में अंतरित करने के संबंध में निर्णय लेने हेतु सशक्त निकाय बनाया जाना चाहिए?
- क्या कॉलेजों को प्रशासनिक एवं विततीय स्वायतता दी जानी चाहिए?
- क्या कॉलेजों को पाठ्यक्रमों का सृजन करने के लिए शैक्षिक स्वायतता दी जानी चाहिए?
- क्या फीस को बढ़ाया जाना चाहिए और कॉलेजों को अवसंरचना में सुधार करने के लिए इसे रखने की अनुमति दी जानी चाहिए?
- क्या अनुबंध अध्यापकों को स्थायी अध्यापकों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए?
- क्या जब अध्यापक कार्य नहीं करते हैं तो उन्हें हटा दिया जाना चाहिए?

VI उच्चतर शिक्षा से कौशल विकास को जोड़ना

शिक्षितों में बढ़ती हुई बेरोज़गारी से माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा में रोज़गार-योग्य कौशलों पर ध्यान देने की आवश्यकता है। किसी भी देश के विकास हेतु कुशल जनशक्ति को बेहद महत्वपूर्ण माना जाता है। यह सर्व विदित है कि व्यावसायिक शिक्षा और कौशल से व्यक्तियों की उत्पादककता, नियोक्ताओं की लाभ अर्जकता और राष्ट्रीय विकास में वृद्धि होती है। असंगठित क्षेत्रकी आवश्यकता को पूराकरने और बच्चों में स्व-रोजगार कौशल उत्पन्न करने के लिए विभिन्न पाठ्यक्रमों के माध्यम से कुशल जनशक्ति को विकसित करना ही व्यावसायिक शिक्षा का लक्ष्य है। यह देखते हुए कि अर्थव्यवस्था के औपचारिक क्षेत्र में जनसंख्या का केवल 7 से 10 प्रतिशत ही कार्यरत है अत: व्यावसायिक शिक्षा के विकास से अनौपचारिक क्षेत्र में कुशल जनशक्ति को लगाया जा सकेगा जिससे उत्पादकता में वृद्धि होगी। केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (केब) और राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (एनकेसी) ने भी व्यावसायिक शिक्षा तक पहुंच में सुधार और भागीदारी की आवश्यकता पर बल दिया है और मुख्य धारा की शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत व्यावसायिक शिक्षा के लचीलेपन की सिफारिश की है कौशल विकास और आर्थिक विकास के बीच संपर्क बनाने हेतु निजी-सार्वजनिक भागीदारी (पीपीपी) को सुदृढ़ करने तथा नवाचारी डिलीवरी मॉडलों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

श्रम बाजार पर प्रौद्योगिकी और वैश्वीकरण के प्रभाव से कार्य माहौल और ज्यादा जटिल हो गया है, कार्यकरण की लगातार बदलती दुनिया से पार पाने के लिए नए-नए कौशलों की आवश्यकता है। परंतु यह शिक्षा प्रणाली श्रम बाजार की मांगों को पूरा करने में सक्षम नहीं है। कार्य शक्ति की रोजगार क्षमता में वृद्धि करने और अधिक रोज़गार अवसर पैदा करने के लिए इस प्रणाली की प्रभाव क्षमता को बेहतर बनाना एक प्रमुख मुद्दा है। इसके अलावा, कुशल काम गए तैयार करने से श्रम बाजार की कार्य क्षमता और लचीलापन बढ़ता है। भारत ने वर्ष 2022 तक 500 मिलियन व्यक्तियों को कौशलयुक्त बनाने का लक्ष्य रखा है। नीतिगत प्राथमिकताओं और युवाओं की क्षमता के उपयोग के मद्देनजर, शैक्षिक नियोजन और प्रबंधन के क्षेत्र में कौशल विकास का महत्व और ज्यादा बढ़ जाता है।

शिक्षा और कौशल विकास को जोड़ने के लिए कई कदम उठाए जा सकते हैं। कौशल पाठ्यक्रमों के सुयोजन और विकास की संभावनाएं हैं - एनएसक्यूएफ; पालिटेक्नीकों में सामुदायिक कालेजों की स्थापना; देश में वर्टिकल/हारिजान्टल मोब्लिटी की सुविधा हेतु अवर-स्नातक स्तर पर व्यावसायिक अध्ययन कार्यक्रम और कौशल क्रेडिट ट्रांसफर आरंभ कर सकता है, हम कौशल-डिप्लोमा-डिग्री अंतराल को पाटना आरंभ कर सकते हैं और क्षेत्र विशिष्ट कौशल को प्रोत्साहित कर सकते हैं। इसी प्रकार, पॉलिटेक्नीक शिक्षा रोजगार योग्य कौशल पर ध्यान दिया जा सकता है।

विचार-विमर्श हेतु प्रश्न

- शिक्षा के किस स्तर पर कौशल को आरंभ किया जाना चाहिए?
- क्या कौशल को उच्च शिक्षा में आरंभ नहीं किया जाना चाहिए?

- आवश्यकता आधारित रोजगार योग्य कौशल पाठ्यक्रमों को आरंभ करने के लिए क्या प्रयास किए जाने चाहिए?
- शिक्षितों की रोजगार क्षमता में वृद्धि हेतु सामान्य व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के मध्य अंतराल को पाटने के क्या तरीके हो सकते हैं?
- अनौपचारिक क्षेत्र में पहले से ही मौजूद कौशलों के प्रमाणीकरण हेतु प्रावधान करने के लिए कौन सा संस्थागत तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए?
- कौशल आधारित शिक्षा को प्रोत्साहित करने हेतु शिक्षा और उद्योग के मध्य संबंध किन तरीकों से स्थापित किया जाना चाहिए?
- कौशल-आधारित पाठ्यक्रमों को चुनने के लिए भावी युवाओं को किस प्रकार का मार्ग-दर्शन और परामर्श प्रदान किया जाना चाहिए?
- क्या ऐसोसिएट डिग्री को समुदाय कॉलेजों में आरंभ नहीं किया जाना चाहिए? जैसा कि अमरीका में किया जाना चाहिए?
- क्या उच्च शिक्षा में किसी भी स्तर पर प्रवेश तथा किसी भी सेमेस्टर के अंत में अस्थायी एक्जिट की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए?
- क्या नियमित पाठ्यक्रम कौशल के मॉड्यूल को पात्र बनाते हैं जो नियोजनीयता में वृद्धि करते हैं?

VII: मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा और ऑनलाइन पाठ्यचर्या संवर्धन

अकेली पारम्परिक शिक्षा उच्चतर शिक्षा की आवश्यकताओं और महत्वाकांक्षाओं को पूरा नहीं कर सकती। दूरस्थ शिक्षा उच्चतर शिक्षा की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में उभर रही है। मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा (ओडीएल) की बढ़ी हुए पहुंच की प्राप्ति, कौशल विकास, क्षमता निर्माण, प्रशिक्षण, नियोजनीयता, जीवनपर्यन्त शिक्षा एवं सतत शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण पद्धति के रूप में पहचान की गई है और उसे स्वीकार किया गया है। मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा ने भारत की शिक्षा संरचना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह उन छात्रों को, जो अपना रोजगार नहीं छोड़ सकते या किन्हीं कारणों से नियमित कक्षाओं में उपस्थित नहीं हो सकते, के लिए मंच उपलब्ध कराती है। हमारी दूरस्थ शिक्षा पद्धति में एक राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नामत: इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) और 14 राज्य विश्वविद्यालय हैं। इसके अलावा, अनेक केन्द्रीय/राज्य विश्वविद्यालय भी दूरस्थ पद्धति से पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं। मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं में 10 प्रतिशत नामांकन सुनिश्चित करने के लिए ओडीएल का विस्तार प्रस्तावित है। तथापि, दूरस्थ शिक्षा में गुणवत्ता संबंधी मुद्दे हैं जो ओडीएल पद्धति में सुधार की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। माधव मेनन समिति ने देश में ओडीएल के कार्यान्वयन में कतिपय परिवर्तनों का सुझाव दिया है।

हाल ही में व्यापक मुक्त ऑनलाइन पाठ्यक्रम (एमओओसी) ने बड़ी तादाद में लोगों का ध्यान आकर्षित किया है। एमओओसी आधुनिक पाठ्यक्रमों के प्रति स्वतंत्र पहुंच बनाता है जो विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा की लागत को कम कर सकता है और उच्चतर शिक्षा के मौजूदा मॉडल को महत्वपूर्ण ढंग से बदल सकता है। इसने विभिन्न उच्चतर शिक्षा संस्थानों/विश्वविद्यालयों को मुक्त शिक्षा प्लेटफार्म की स्थापना के माध्यम से अपने पाठ्यक्रमों को ऑनलाइन उपलब्ध कराने के लिए प्रोत्साहित किया है।

भारतीय विश्वविद्यालयों को मानविकी, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान और प्रौद्योगिकियों में एमओओसी कार्यक्रम बनाने की जरूरत है। यह कार्यक्रम मुक्त शिक्षा, ऑनलाइन शिक्षा के व्यापक संदर्भ में होना चाहिए और इसे करने की जरूरत है। शिक्षा शास्त्रीय दृष्टि से विश्वविद्यालय को अध्ययन कार्यक्रमों, शिक्षण-अधिगम सामग्री, वीडियो आदि, ऑनलाइन पाठ्यक्रम की शुरूआत करने के लिए जिनकी जरूरत हो सकती है,की विषय-वस्तु तैयार करने की आवश्यकता है। पाठ्यक्रम के स्वरूप और विषय-वस्तु पर निर्भर करते हुए अन्य संस्थाओं से सहयोग बढ़ाना अपनी पहुंच बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण है।

एमओओसी में प्रतिभागिता के लिए प्रशिक्षुओं को प्रेरित करना अनेक उच्चतर शिक्षा संस्थाओं के स्टेकहोल्डरों की अभिरूचि का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। शोधकर्ताओं द्वारा ड्यूक यूनिवर्सिटी में किए गए सर्वेक्षण के परिणाम दर्शाते हैं कि प्रतीकात्मक रूप से चार श्रेणियां, क) विषय-वस्तु की समझ; ख) खेल, मनोरंजन, सामाजिक अनुभव और बौद्धिक प्रोत्साहन; ग) साधन, आमतौर पर पारम्परिक शिक्षा विकल्पों

में आने वाली बाधाओं के साथ संयोजन और घ) ऑनलाइन शिक्षा के अनुभव या उसे सीखना छात्र-प्रेरणा के अंतर्गत आती हैं।

ज्ञान प्रसारण पद्धति अपनाने के लिए एमओओसी की आलोचना की गई है; वस्तुत: इन्हें प्रौद्योगिकी-समर्थित पारम्परिक शिक्षक-केन्द्रित शिक्षा माना जाता है। यह पद्धति व्यक्तिगत अनुभव प्रदान करती है जिसमें यह छात्रों को ऑनलाइन सामग्री के माध्यम से विकल्प अपनाने का अवसर और स्वचालित फीडबैक भी देती है। तथापि, यह पद्धति सामाजिक अधिगम अनुभव या छात्र की व्यक्तिगत रूप से निगरानी नहीं करती।

उच्चतर शिक्षा संस्थाओं के लिए एमओओसी की गुणवत्ता सुनिश्चितता का मुद्दा एक बहुत बड़ा सरोकार रहा है। कई मामलों में अन्य ऑनलाइन पाठ्यक्रमों की तुलना में एमओओसी-संरचना की कमी है और इसमें शायद ही अनुदेशक या शिक्षक की केन्द्रीय भूमिका रहती हो। एमओओसी की मुक्त प्रवृति उन लोगों का समूह बनाती है जिन्होने इस शिक्षण दृष्टिकोण से जुड़ने और इसके प्रति आश्वस्त रहने का चुनाव किया है। एमओओसी प्रतिभागियों से डिजिटल साक्षरता के निर्धारित स्तर की मांग करता है जिसने पहुंच में समावेशिता और समानता के सरोकार उत्पन्न हुए हैं।

विमर्श के प्रश्न

- क्या मुक्त पाठ्यक्रम और एमओओसी कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में शिक्षण को अनुपूरित/संपूरित किया जाना चाहिए?
- क्या आपके राज्य में स्थित कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में एनकेएन या एनएमईआईसीटी के माध्यम से कनेक्टिविटी उपलब्ध है?
- क्या आप एमओओसी या विशेष ऑनलाइन पाठ्यक्रम को बढ़ावा देने का सुझाव देते हैं? यदि हां, तो क्या आप बता सकते हैं कि आपके राज्य में किस विषय से संबंधित ऑनलाइन पाठ्यक्रम लाभदायक होंगे?
- ऑनलाइन पाठ्यक्रम के कार्यान्वयन में कौन-कौन सी बाधाएं हैं और उन्हें दूर कैसे किया जा सकता है?
- एमओओसी किस सीमा तक आमने-सामने की शिक्षण-अधिगम प्रणाली आधारित पारम्परिक संस्थाओं के लिए विकल्प हो सकता है?
- ग्रामीण क्षेत्र में एमओओसी तक पहुंचने में कौन-कौन सी बाधाएं हैं?
- एमओओसी अधिगम अवसरों के विस्तार या मौजूदा पाठ्यक्रमों की गुणवत्ता सुधारने में कैसे मदद कर सकता है?
- क्या छात्रों को किसी भी समय शिक्षण के लिए डीटीएच की सुविधा दी जानी चाहिए?
- क्या ऑनलाइन परीक्षा ग्रेडिंग के 20% तक होनी चाहिए?

VIII: प्रौद्योगिकी समर्थित शिक्षण के लिए अवसर

आज प्रौद्योगिकी हर जगह व्याप्त है और इसका प्रभाव हमारे दैनिक जीवन के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करता है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में हुए विकास ने शैक्षणिक सेवा को प्रदान करने के तरीके बदल दिए हैं। प्रौद्योगिकी संस्थागत अनुदेशों, निर्धारित अध्ययन कार्यक्रमों और शिक्षक केन्द्रित शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दायरे से बाहर निकाल कर शिक्षा और अधिगम में समर्थ बनाती है। आईसीटी स्कूल और विश्वविद्यालयों के दायरे से बाहर शिक्षा प्राप्ति में मदद करती है। शिक्षा सेवाएं प्रदान करने की अन्य पद्धतियों के बाद इ-लर्निंग की सबसे अधिक मांग है।

द वर्ल्ड सम्मिट ऑन द इन्फोर्मेशन सोसायटी (डब्ल्यूएसआईएस) और 2000 के प्रारंभ में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की श्रृंखला इ-लर्निंग की प्राथमिकता के प्रमुख क्षेत्र के रूप में बल देती है। आज डिजिटल साक्षरता और इ-कौशल ने आयु, आय और वर्ग की बाधाओं को दूर कर दिया है। भारत सरकार उच्चतर शिक्षा एवं शोध को जोड़ने और शिक्षा एवं प्रशासन के सभी स्तरों पर ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी उपलब्ध कराने की योजना बना रही है।

प्रौद्योगिकी में डिलिवरी प्रयासों में तेजी लाने, डिलिवरी की गुणवत्ता का स्तर स्थापित करने और उपभोक्ताओं को गुणवत्तायुक्त सेवाओं की डिलिवरी करने की क्षमता है बशर्ते, उपभोक्ता, प्रदाता और डिलिवरी तन्त्र सभी समान रूप से प्रौद्योगिकी के सूक्ष्म भेद के प्रति जागरूक हों। देशों और क्षेत्रों के बीच प्रौद्योगिकियों और साधनों की व्यापक किस्में व्याप्त हैं। एक समय वह था जब वे देश जो शिक्षा के लिए रेडियो और डीवीडी पर निर्भर होते थे, आज मोबाइल फोन, एमपी 3 प्लेयर, डिजिटल कैमरा या वीडियो गेम उपस्कर आदि विधियों का प्रयोग कर रहे हैं। प्रौद्योगिकी के सभी लाभों के मद्देनजर सूचना और सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा मिशन (एनएमईआईसीटी) को सभी उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में 'कभी भी कहीं भी' पद्धति से सभी प्रशिक्षुओं के लाभार्थ शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में आईसीटी की सम्भाव्यता को शक्ति प्रदान करने के लिए वर्ष 2009 में अनुमोदित किया गया था। इसके दो मुख्य घटक हैं:-

- एक्सेस डिवाइस के प्रावधान के साथ संस्थाओं और प्रशिक्षुओं को कनेक्टिविटी प्रदान करना;
- कंटेंट निर्माण।

लगभग 404 विश्वविद्यालयों को 1 जीबीपीएस (गैगा बाइट्स प्रति सेकंड) की कनेक्टिविटी प्रदान की गई है या योजना के तहत उन्हें उसी के समरूप बना दिया गया है और 19,851 कॉलेजों को भी वीपीएन कनेक्टिविटी उपलब्ध करा दी गई है। 250 से भी अधिक पाठ्यक्रमों को पूरा कर लिया गया है, उन्हें राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी समर्थित शिक्षण (एनपीटीईएल) फेज-I में उपलब्ध करा दिया गया है और एनपीटीईएल के फेज-II में आईआईटी, मद्रास द्वारा इंजीनियरिंग और विज्ञान के विभिन्न विषयों में अन्य 996 पाठ्यक्रमों को तैयार किया जा रहा है। कम लागत वाली एक्सेस-कम-कम्प्यूटिंग डिवाइस

आकाश-2 को 11 नवम्बर, 2012 को शुरू किया गया था। आईआईटी बम्बई द्वारा एनएमईआईसीटी के तहत तैयार किए गए ए-व्यू सॉफ्टवेयर का प्रयोग करते हुए शिक्षकों के सशक्तिकरण के लिए एक समय में 10000 अध्यापकों के बैच हेतु अनेक कार्यक्रम तैयार किए गए हैं। इस संदर्भ में भारत ऐसी प्रौद्योगिकियों और डिवाइसों पर तभी निर्भर रह सकता है जब इन प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए यह अवसरंचना ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में उपलब्ध करवा दी जाएगी। उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में विश्व स्तर पर ज्ञान प्रवाह के अभिग्रहण हेतु हमें पद्धति के उन्नयन करने की जरूरत है। विश्व स्तर पर हो रहे परिवर्तनों के मद्देनजर स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उच्चतर शिक्षा से संबद्ध प्रत्येक कॉलेज/विश्वविद्यालय को आधुनिक प्रौद्योगिकी की दृष्टि से सुविधाओं के उन्नयन की जरूरत है जो प्रशिक्षुओं को व्यापक रूप से समर्थ बना सके। निश्चित रूप से शिक्षण-अधिगम स्थल पर वाई-फाई और कम्प्यूटर सुविधाएं आवश्यक हैं। परन्तु, फिर प्रश्न यही उठता है कि सरकारी सहायता से चल रहे कॉलेज/विश्वविद्यालयों में बड़ी संख्या में नामांकित छात्र किस हद तक वाई-फाई और पुस्तकालय में कम्प्यूटर, ई-लाइब्रेरी, ई-बुक्स, डिजिटल लाइब्रेरी जैसी महंगी सुविधाओं का प्रयोग कर पाते हैं।

विमर्श के प्रश्न

- क्या छात्र और संकाय टीईएल की आवश्यकता और क्षमता को समझते हैं, यदि हां, तो वे अधिकतम प्रयोग के लिए इसे किस प्रकार से जोड़ना चाहते हैं।
- क्या प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा पूरी करने के लिए आवश्यक अवसंरचना उपलब्ध है।
- क्या संस्थाओं द्वारा एनपीटीईएल, एनएमईआईसीटी के ई-कंटेंट या अन्य किसी इलेक्ट्रॉनिक कंटेंट का प्रयोग किया गया है, यदि हां, तो इसके क्या-क्या लाभ और हानि हैं?
- कृपया विशेषरूप से इस बात का उल्लेख करें कि टीईएल कॉलेज और विश्वविद्यालयों की शैक्षणिक शिक्षण और अनुसंधान में किस प्रकार से सहायता कर सकता है?
- यदि कोई सर्वोत्तम प्रक्रिया हो तो साझा करें।
- क्या कौशल विकास पाठ्यक्रमों को प्रौद्योगिक समर्थित होना चाहिए?
- क्या अध्यापक प्रशिक्षण को आंशिक रूप से ऑन लाइन किया जाना चाहिए।
- कौशल विकास कार्यक्रमों की शुरूआत के लिए समय-सीमा क्या होनी चाहिए :- उदाहरणतया (माना कि राज्य में 500 कालेज हैं) क्या हम 50 कालेजों को 2015 के शैक्षिक सत्र, 100 को 2016 के, 300 को 2017 के और 500 को 2018 के शैक्षिक सत्र तक शुरू कर सकते है।

IX: क्षेत्रीय असमानताओं का समाधान

भारत में शिक्षा का प्रसार क्षेत्रों और समूहों के बीच असमानताओं से भी जुड़ा हुआ है। उच्चतर शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित करना अधिक भागीदारी गतिशीलता लाने के लिए महत्वपूर्ण है जिससे सकल नामांकन अनुपात में वृद्धि हो। वस्तुत: भारत में उच्चतर शिक्षा के प्रसार की प्रक्रिया में क्षेत्रीय असमानताओं में वृद्धि हुई है। राज्यों में उच्चतर शिक्षा के विकास में विद्यमान असमानताएं जीईआर (सकल नामांकन अनुपात) में भिन्नताओं का अच्छा सूचक है। राष्ट्रीय स्तर पर जीईआर 2002-2003 में 8.97 प्रतिशत से बढ़कर 2011-12 में 20.4 प्रतिशत हो गया है।

कुछ वर्षों से नामांकन (जीईआर) में अंत: राज्यीय असमानताएं बढ़ी हैं। वर्ष 2002-03 में जम्मू और कश्मीर में जीईआर की भिन्नता 5-0 प्रतिशत और चंडीगढ़ में 28.7 प्रतिशत रही। वर्ष 2011-12 में जीईआर भिन्नता झारखंड में 8.4 प्रतिशत और चंडीगढ़ में 53 प्रतिशत के बीच रही। यह दर्शाता है कि वर्ष 2002-03 में जीईआर भिन्नता में 23.7 प्रतिशत बिंदु से लेकर वर्ष 2011-12 में 44.6 प्रतिशत बिंदु तक वृद्धि हुई।

जीईआर में बढ़ती हुईं असमानताएं विभिन्न राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अनुभूत वृद्धि की दरों में भिन्नता के कारण हुईं। राज्य स्तरीय आंकड़ों की गहन जांच से संकेत मिलेगा कि जीईआर में अधिक वृद्धि मुख्यता उन राज्यों में हुई जहां कुल संस्थाओं और नामांकनों में निजी संस्थाओं की हिस्सेदारी अधिक थी। इसका अपवाद छोटे राज्य और संघ राज्य क्षेत्र जैसे दिल्ली, चंडीगढ़ हैं। यहां आंध्र प्रदेश और कर्नाटक की तरह दक्षिण राज्यों की उच्चतर शिक्षा संस्थाओं के अत्यधिक केन्द्रीकरण का मामला भी है। चूंकि बहुत से राज्यों में जहां विशेष रूप से गैर-सहायता प्राप्त निजी क्षेत्र जीईआर की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है इसलिए उसमें सामर्थ्य और गुणवत्ता के मामले प्रमुख चिंता के विषय रहे हैं।

नवीनतम साक्ष्यों से भी पुन: पुष्टि हुई है कि उच्चतर शिक्षा में सहभागिता क्षेत्रों और राज्यों तथा सामाजिक समूहों और जेन्डर में असमान वितरण के कारण हुआ है। जबकि, आंध्र प्रदेश में कॉलेजों की अधिकतम संख्या अर्थात प्रति 100,000 की जनसंख्या पर 48 है, यह बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल में प्रति 100,000 की आबादी पर 6,7 और 8 है। इसी प्रकार चंडीगढ़ का 53 प्रतिशत उच्चतम जीईआर (सभी समूह) है। लेकिन अनुसूचित जाति का जीईआर 19.2 बना हुआ है। जबकि गुजरात में जीईआर राष्ट्रीय औसत से कम है, राज्यों का कुल और अनुसूचित जाति का हिस्सा क्रमश: 17.6 प्रतिशत और 18 प्रतिशत है। कई पूर्वोत्तर और पूर्वी राज्यों में जीईआर राष्ट्रीय औसत से नीचे है। ग्रामीण और शहरी महिलाओं में जीईआर 8.3 प्रतिशत और 30.5 प्रतिशत है और अनुसूचित जनजाति 7.7 प्रतिशत तथा इसाई आबादी में लगभग 45 प्रतिशत है।

यहां दो महत्वपूर्ण मुद्दे उठते हैं: क) राज्य और क्षेत्रीय स्तरों तथा विभिन्न सामाजिक समूहों और महिलाओं के नामांकन में असमानता लगातार बनी हुई है, ख) विद्यमान संस्थाओं में निम्न गुणवत्ता और पर्याप्त सुविधाओं की कमी है। असमानताओं को दूर करने के लिए एक लक्षित दृष्टिकोण की आयोजना की आवश्यकता है।

विमर्श के प्रश्न

- हम उच्चतर शिक्षा की विषम सुलभता के मामले का समाधान कैसे कर सकते हैं जो मौजूदा क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करें और विद्यमान योजनाएं इन अंतरालों को पाटने में विफल कैसे रही हैं?
- ग्रामीण क्षेत्रों के लाभवंचित समूहों और आर्थिक दृष्टि से कमजोर घरों को लक्षित कैसे किया जाए?
- क्या वंचित क्षेत्रों के लाभवंचित समूहों के छात्रों को आकर्षित करने के लिए प्रोत्साहन प्रणाली सफल होगी?
- क्या कम नामांकन वाले राज्यों को लक्षित करना और धनराधि आवंटन के मानदंडों में परिवर्तन करना मददगार होगा?
- आप शिक्षा में क्षेत्रीय पिछड़ेपन को कैसे दूर कर सकते हैं? निम्नलिखित में किसी एक को चुनिए?
    - और अधिक कॉलेज खोले जाएं
    - मौजूदा कॉलेजों को सुदृढ़ किया जाए।
    - और अधिक पॉलिटेक्किल खोले जाएं।
    - मौजूदा पॉलिटेक्किलों को सुदृढ़ किया जाए।
- क्या रूसा क्षेत्रीय विषमताओं के मुददों के समाधान के लिए पर्याप्त है?
- जनजातीय क्षेत्रों, पहाड़ी क्षेत्रों और पूर्वोत्तर पर विशेष ध्यान देने के लिए क्या-क्या कदम उठाए जा सकते हैं?
- तटीय क्षेत्रों के लिए क्या शिक्षा के कोई नए अवसर ?

X: उच्चतर शिक्षा में स्त्री-पुरूष और सामाजिक अंतराल कम करना

उच्चतर शिक्षा में सहभागिता के अनुसार सामाजिक समूहों में व्यापक असमानताएं विद्यमान हैं। 12वीं योजना में कहा गया है कि इसाइयों में जीईआर 44.9 प्रतिशत है जबकि अनुसूचित जनजाति में यह केवल 7.7 प्रतिशत, मुस्लिमों में 9.6 प्रतिशत और अनुसूचित जाति में 11.6 प्रतिशत है। इन सभी दृष्टांतों में महिलाओं का जीईआर पुरूषों से पीछे है। भारत इसकी भरपाई करने के माध्यमिक से उच्चतर शिक्षा स्तरों तक बढ़ाने के प्रयास कर रहा है। तथापि अक्सर पढाई जारी रखना गरीब परिवारों के छात्रों के लिए काफी महंगा हो जाता है क्योंकि वे वेतन के लिए काम करने के बजाय अध्ययन करते हैं। अध्ययन दर्शाते हैं कि हाशिए पर रहने वाले समुदाय के युवा उच्चतर शिक्षा जारी न रखकर जीविकोपार्जन को प्राथमिकता देते हैं। भारत ने लाभवंचित परिवेश से आने वाले छात्रों के लिए छात्रवृत्तियों सहित कई प्रोत्साहन योजनाएं आरम्भ की हैं। ये उपाय लाभवंचित समूहों के छात्रों को कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में आने और इससे भी महत्वपूर्ण उनमें बने रहने के लिए छात्रों को आकर्षित करते पर्याप्त प्रतीत नहीं होते।

समावेशी उच्चतर शिक्षा के लिए स्त्री-पुरूष असमानता शहरी-ग्रामीण, अंत:क्षेत्रीय और अंत: सामाजिक समूह असमानताओं को सार्थक रूप में समाप्त करने के प्रयास किए जाने चाहिए। इसमें अब तक समाज के हाशिए पर रहे वर्गों के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों एवं निजी क्षेत्र की उच्चतर शिक्षा में सुसाध्य और प्रोत्साहक की भूमिका की आवश्यकता है। इसलिए इस नीति का प्रमुख जोर समावेशिता प्रोत्साहन पर होना चाहिए ताकि हाशिए के वर्गों के और अधिक छात्रों को उच्चतर शिक्षा की परिधि में समायोजित किया जा सके।

कुछ राज्यों में उच्चतर शिक्षा की सुलभता के बीच अंतराल समाप्त कर दिया गया है और शहरी क्षेत्रों में इसे कम किया गया है। भाषा नीति का उद्देश्य इस अंतराल को कम से कम समग्र स्तर तक पूर्णतया समाप्त करना होगा। उच्चतर शिक्षा के प्रावधानों और कार्यक्रमों, जो सामाजिक रूप से वंचित समूहों द्वारा उच्चतर शिक्षा के अवरोधों को कम करने में सहायता कर सकें , में विविधता लाएं। नि:शक्त छात्रों की पहुंच को सुधारना जिसके लिए बुनियादी अवसंरचना सुविधाओं में सुधार की आवश्यकता होगी ताकि उच्चतर शिक्षा की सभी संस्थाओं में नि:शक्त छात्रों की पहुंच हो और ऐसे छात्रों के लिए सहायता सुविधाओं का विस्तार और उनकी शैक्षिक जरूरतों को पूरा करने के लिए शिक्षक तैयारी को बढ़ाया जाए।

विमर्श के प्रश्न

- जनसांख्यिकी लाभांश लेने के लिए माध्यमिक, उच्चतर और तकनीकी शिक्षा के बाद अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अल्पसंख्यक समूहों की भागीदारी बढ़ाने के लिए आगे क्या कदम उठाए जाने चाहिए?

- सांस्थानिक परिसरों के भीतर और बाहर सुरक्षित और निरापद वातावरण मुहैया करते हुए उच्चतर शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता और निष्पादन कैसे प्रोत्साहित किया जाए?
- उच्चतर शिक्षा में परम्परागत कार्यों की औपचारिकता के सम्भावित तरीके क्या हैं? क्योंकि, परम्परागत कार्यों में अधिकतर अल्पसंख्यक शामिल होते हैं।
- सकारात्मक कार्रवाई हस्तक्षेपों को पुनर्जीवित कैसे किया जाना चाहिए जिससे उन्हें दक्ष और प्रभावी बनाया जाए?
- यह कैसे सुनिश्चित किया जाए कि वंचित वर्गो के वे बच्चे स्कूली पढ़ाई पूरी करने के बाद कॉलेज में प्रवेश लेते है और पढ़ाई करते हैं?
- कैसे सुनिश्चित किया जाए कि लड़किया किसी कॉलेज या पॉलिटेक्किल में प्रवेश लेती हैं?
- लड़कियों की भागीदारी किससे सुधर सकती है?
  छात्रावास छात्रवृति सुरक्षा आश्वासन
- क्या पढ़ाई के साथ-साथ कमाई की शुरूआत लड़ कियो के कॉलेज आने के अवसरों में सुधार कर सकती है?
- आप महिला-पुरूष अंतराल को कैसे पूरा कर सकते हैं - प्राथमिकता के आधार पर इन्हें घटते क्रम में रखिए।

  पहली प्राथमिकता के लिए 1 लिखें

  1. लड़कियों छात्रवास उपलब्ध करवाइए स्कूल मे रखें।
  2. उन्हें आवास जाने के लिए छात्रवृत्ति दें।
  3. उन्हें शिक्षण स्तर संबंधी समस्या से उभरने के लिए कम्प्यूटिंग डिवाइस और कनेक्टिविटी उपलब्ध कराएं।
  4. उन्हें कौशल प्रशिक्षण दें ताकि पढ़ाई के साथ कमाई कर सकें।
  5. प्रवेश- निर्गम (इंट्री एंड एक्जिट) प्रक्रिया को लचीला बनाएं।

XI: उच्चतर शिक्षा को समाज से जोड़ना

आजादी से ही विश्वविद्यालयों, कालेजों, शिक्षकों और छात्रों की संख्या में बहुविध वृद्धि हुई है। काफी हद तक यह वृद्धि अनियोजित लगती है और नियोजन और बाहरी दुनिया के साथ शिथिल संबंधों को दर्शाती है। विभिन्न रिपोर्टों में दर्शाया गया है कि हालांकि, नौकरियां व्यावसायिक विषयों में हैं लेकिन डिग्रियां सामान्य शिक्षा में मुख्यतया कला और मानविकी में बढ़ती जा रही हैं। एक ओर देश की स्थिति विडम्बना की हो गई है। विकासात्मक कार्य के लिए पर्याप्त जनशक्ति नहीं है तो दूसरी ओर शिक्षित युवा बड़ी संख्या में बेरोजगार हैं। शैक्षिक वृद्धि का विस्तार और विविधिता नौकरियों की क्षेत्रीय वृद्धि के लगभग प्रतिकूल है।

सामाजिक विकास में उच्चतर शिक्षा संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण ढंग से बढ़ी है। हाल ही के वर्षों में उच्चतर शिक्षा समाज से अलग-थलग हो गई है और उच्चतर शिक्षा को समाज के साथ संबंधों को पुन: स्थापित करने और सशक्त बनाने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों को सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने और सामुदायिक विस्तार कार्यक्रमों में संलग्न रहने की जरूरत है।

मौजूदा और उत्पन्न हो रहीं चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए उच्चतर शिक्षा का विकास 'उन्नत भारत' के लक्ष्य को प्राप्त करने और लोगों की क्षमताओं का विकास करने के लिए महत्वपूर्ण है। ज्ञान के अभूतपूर्व प्रस्फुटन ने यह सिद्ध कर दिया है कि उच्चतर शिक्षा को इतना परिवर्तनशील होना चाहिए जितनी वह पहले कभी नहीं थी और यह लगातार अज्ञात अप्राधिकृत क्षेत्रों में प्रविष्ट हो रही है। सरकार द्वारा उच्चतर शिक्षा में किए गए निरंतर प्रयासों के बावजूद देश को अवसंरचना और पर्याप्त एवं अच्छी गुणवत्ता वाले संकाय की भर्ती में और अधिक निवेश के माध्यम से उच्च कोटि की शिक्षा शैक्षणिक सुधारों के संवर्द्धन, अभिशासन सुधार और गुणवत्ता व लाभ वंचित समुदायों के समावेश के उद्देश्य से संस्थागत पुनर्संरचना के लिए सुलभता के बड़े अवसरों की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। उच्चतर शिक्षा को देश की विकासात्मक कार्यसूची पर अपनी अंदरूनी शक्ति और संसाधनों से चलना चाहिए। सुलभता और साम्यता में सुधार के साथ-साथ इसे उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में शिक्षण और अधिगम की गुणवत्ता सुधारनी चाहिए।

विमर्श के प्रश्न

- भारत को विश्वविद्यालयों द्वारा स्थानीय विनियोजन बढ़ाने के लिए उच्चतर शिक्षा की कार्यसूची को प्राथमिकता देनी चाहिए?
- उच्चतर शिक्षा में अनुसंधान और विकास कार्यकलापों के संवर्द्धन के लिए क्या प्रयास किए जाने चाहिएं जो क्षेत्रीय विनिर्माण क्षेत्रों में सहायता करते हैं?
- क्षेत्रीय और स्थानीय श्रम की बजाय कौशल आवश्यकताओं के हल के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाने हेतु समान शैक्षिक संस्थाओं को किस तरह पुनजीर्वित करना चाहिए?
- कृपया उच्त्तर अधिगम संस्थाओं द्वारा सामुदायिक विनियोजन के कुछ कार्यकारी दृष्टांत का साझा करें।

- छात्र पढ़ाई करते समय अपने समुदाय को कैसे योगदान दे सकते हैं?
- छात्र इस बारे में कैसा महसूस करते हैं कि वे पढ़ाई करते समय क्या योगदान दे सकते हैं?
- रोजगार प्राप्ति के बाद वे कैसे योगदान दे सकते हैं (उनके विचार)
- किसके द्वारा अध्यापक का मूल्यांकन किया जाना चाहिए-

  समुदाय छात्र अभिभावक उपर्युक्त सभी
- उनके लिए सुधारात्मक कार्रवाई कौन सी है?

  1. पद से हटाना 2. पद पर बनाए रखना 3. उनकी परिवीएक अवधि पूरी न की जाए।

  4. पदोन्नति न की जाए 5. 1,2, और 3, 6. 2,3 और 4 7. 1,2,3,4
- क्या समुदाय कल्याण विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में उच्चतर शिक्षा का एक महत्वपूर्ण भाग नहीं है?

XII: उत्तम शिक्षकों का निर्माण (विकास)

पढ़ाई की गुणवत्ता शिक्षकों के गुणों पर निर्भर होती है। उनका योग्यता स्तर और शैक्षणिक अनुभव शिक्षण अधिगम प्रक्रिया और अधिगम परिणामों को प्रभावित करता है। किसी संस्थान में अधिगम परिणामों को शिक्षक की शैक्षिक तैयारी की अवधि, विषय-वस्तु की समझ का स्तर और गम्भीरता शिक्षक के अध्यापन कौशल की सीमा निर्धारित करती है। दुर्भाग्य है, हमारे अधिकतर शिक्षकों के पास, विशेषरूप से कॉलेजों में डॉक्टोरल डिग्री नहीं है।

एक मुख्य बाधा अच्छे छात्रों को शिक्षकों के रूप में आकर्षित करना है। निरपवाद रूप से जब कोई स्नातक रोजगार की तलाश करता है, प्राथमिकता सूची में शैक्षिण व्यवसाय ऊपर नहीं होता है। शिक्षकों को देय वेतन स्तर और सुविधाएं, जिनकी हाल में वृद्धि की गई है, अन्य क्षेत्र की तुलना में कम आकर्षक हैं। मेधावी छात्रों के पूल का सृजन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि वे अन्ततः शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सुधार करेंगे। यूजीसी शिक्षण व्यवसाय में बुद्धिमान, उत्कृष्ट और मेधावी छात्रों को आकर्षित करने और बनाए रखने के लिए बहुत से कार्यक्रमों जैसे पुरस्कारों, छात्रवृत्तियों का प्रावधान और सम्मेलनों में भाग लेने की सुविधा आदि को वित्तपोषित कर रहा है।

शिक्षण व्यवसाय में उनके जुड़ने के बाद उन्हें प्रभावी रूप से शामिल करने और शोध और शिक्षण की ओर प्रेरित करने की आवश्यकता है। परिसर के बाहर से अध्यापकों के शामिल करने की प्रक्रिया के बजाय यह एक अच्छी घरेलू प्रक्रिया होगी यदि युवा एवं नए अध्यापक और अधिक ज्ञानात्मक और अध्यापन विकास के लिए प्रशिक्षुता के दौरान अनुभवी और श्रेष्ठ अध्यापकों के अध्यापन कौशल का अवलोकन कर सकें। उनके विषय, अध्यापन और तकनीकी ज्ञान विशेषरूप से आईसीटी के ज्ञान की वृद्धि करने संबंधी प्रक्रिया आवश्यक है तथा इसे शिक्षकों के क्षमता विकास के अभिन्न अंग के रूप में बनाए रखने की आवश्यकता है। जब छात्र शिक्षकों से अधिक तकनीकी जानकारी रखते हैं तो आईसीटी और ऑडियो विजुअल का व्यापक प्रयोग समय की मांग बन गया है।

शोध समान महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिस पर बल देने की आवश्यकता है क्योंकि शोध से शिक्षक के शिक्षण स्तर और शैक्षिक विश्वसनीयता में सुधार होता है। यह केवल आर एंड डी (अनुसंधान और विकास) गतिविधियां ही हैं जिनके माध्यम से शिक्षक अपने ज्ञान को अद्यतन कर सकता है, अपने विचारों को अधिक स्पष्ट बना सकता है, शिक्षण के उच्च स्तर पर पहुंच सकता है तथा सक्रिय शोध के माध्यम से प्रकट कर सकता है। एक अवधि के लिए शिक्षण हेतु श्रेष्ठ विश्वविद्यालयों से संकाय आमंत्रित करने की वैश्विक पहल एक अच्छा विचार है लेकिन वास्तविक कठिनाइयों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। जो विद्वान विदेशों में पढ़ा रहे हैं वे भारत की वास्तविकता से कदाचित परिचित नहीं है। तथापि, वास्तविक आवश्यकताओं को समझे बिना शिक्षा के विदेशी तरीकों का कृत्रिम आरोपण अनुपयोगी होगा।

विमर्श के प्रश्न

- विश्वविद्यालय क्षेत्र से शिक्षण व्यवसाय में प्रतिभाओं को आकर्षित करने के लिए क्या कार्य योजना हो सकती है?
- शोध और शैक्षिक विकास के लिए सहायक प्रणाली किस प्रकार प्रदान की जाए?
- उच्चतर शिक्षण संस्थानों के शिक्षकों में शोध को प्रोत्साहित करने के लिए क्या प्रोत्साहन दिया जा सकता है?
- क्या राष्ट्रीय अध्यापक एवं प्रशिक्षण मिशन योजना प्रप्ति है या फिर कुछ अतिरिक्त विशेषताओं के साथ इसे बढ़ाया जाए और वे कौन-कौन से हैं?
- शैक्षिक नेतृत्व प्रशिक्षण की कितनी प्रतिशतता ऑन लाइन होनी चाहिए।
- शिक्षण शास्त्र की कितनी प्रतिशतता ऑन लाइन होनी चाहिए।
- पेशेवर पाठ्यक्रम प्रशिक्षण की कितनी प्रतिशतता ऑन लाइन होनी चाहिए।
- उद्योग विशेषज्ञों की अध्यापकों के रूप में क्या भूमिका हो सकती है?
- क्या सभी कुलपतियों और प्रधानाचार्यों के लिए शैक्षिक नेतृत्व पाठ्यक्रम जरूरी नहीं है?
- अध्यापकों को उनके क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर विकसित हो रहे नए ज्ञान के प्रति यथासमय या लगातार अवसर कैसे दिए जा सकते हैं?
- क्या काउंसलिग अध्यापकों की भी आवश्यक भूमिका नहीं है?

XIII: उच्चतर शिक्षा में छात्र-सहायता प्रणाली को बनाए रखना

भारत, संसार के सबसे कम आयु वाली जनसंख्या का घर है - जिसमें 600 मिलियन नवयुवक 25 वर्ष से कम आयु के हैं। यदि सरकार का उच्चतर शिक्षा में पहुंच (एक्सेस) का विस्तार करने संबंधी नीति-निर्धारण और नामांकन-वृद्धि विकसित विश्व के स्तर पर इसी प्रकार जारी रहते हैं तो हमारे देश में विश्व की अधिकतम छात्र-संख्या होगी। चूंकि, हम उच्चतर शिक्षा के जनसमूह के प्रावधान वाले युग की ओर अग्रसर हैं और शिक्षण प्राप्त करने वाले नवयुवकों की अधिकांश संख्या पहली पीढ़ी के रूप में तैयार होने वाली है इसलिए इस चुनौती के पैमाने और व्यापकता की सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

छात्र-सहायता प्रणाली पर विचार करते हुए नीतिगत-नवाचार को एक महत्वपूर्ण घटक बनाए जाने की आवश्यकता है। हालांकि, 11वीं योजना तक केन्टीन, कॉमन-रूम, पेयजल और परामर्श केन्द्रों आदि जैसे असवसंरचना के वास्तविक प्रावधान पर फोकस रहा है; XIIवीं योजना में छात्रों के ऋणों का उल्लेख किया गया है। छात्र ऋण उत्तरोत्तर लोकप्रिय होते जा रहे हैं, परन्तु, बड़े पैमाने पर इन्हें भी उच्चतर शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने वाले विश्वसनीय तरीके के रूप में नहीं देखा जा सकता। छात्र-ऋण का छात्रों की मनोवृत्ति पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव और उच्चतर शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण और वे मूल्य जो ये ऋण छात्रों के मस्तिष्क में उत्पन्न करते हैं, इसके अतिरिक्त, उच्चतर शिक्षा के व्यावसायीकरण में ये ऋण जो प्रबल भूमिका निभाते हैं उसकी ऋण कार्यक्रम के विस्तार के पूर्व जांच-पड़ताल आवश्यक है।

इसके अलावा, छात्रों के संस्थागत कार्यों की प्रचलित संस्कृति विश्वविद्यालय के भीतर ''अधिष्ठाता छात्र कल्याण'' - कार्यालय द्वारा संचालित की जाती है जिसे स्वयं छात्रों की आवश्यकताओं के वैविध्य और परिवर्तनों पर सुग्राह्य होने की आवश्यकता है। जबकि, कल्याण, सहायता और वास्तविक अवसंरचना पर जोर देने की आवश्यकता के बावजूद नीतिगत विचार के घटक के रूप में छात्रों के अधिकार को समेकित करने की योजना के ऊँचनीच के दृष्टिकोण में तत्काल परिवर्तन की आवश्यकता है। छात्रों को केवल नीतिगत अन्तरण के कर्मप्रधान प्राप्तकर्ता के रूप में ही नहीं, बल्कि, उन्हें अपने अधिकार सहित हितधारकों के रूप में विचार करने की आवश्यकता है। छात्र, उच्चतर शिक्षा प्रणाली के केन्द्र में हैं और वे सहायता प्रणाली से परे हैं इसलिए उन्हें निर्णय की सभी प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण हितधारकों के रूप में समझा जाना चाहिए।

एक विश्वविद्यालय में छात्र-सहायता प्रणाली के लिए अच्छी अवसंरचना जैसे - कॉमन-रूम, मनोरंजन सुविधाएं, परामर्श-केन्द्र, छात्र-शिकायत निवारण सुविधाएं, आर्थिक सहायता से संबंधित छात्र-सहायता - प्रवेश के समय ऋण, अल्पकालिक ऋण, नवाचार निधि/पुरस्कार और निरंतर समावेशी सहायता-जिनमें वंचित सामाजिक पृष्ठिभूमि के छात्रों को विभिन्न शैक्षणिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

केन्द्र और राज्य स्तरों पर छात्रों की आर्थिक सहायता से संबंधित अनेक योजनाएं लागू की जा रही हैं। परन्तु, प्रश्न यह है कि क्या इन योजनाओं से लक्षित उद्देश्यों की पूर्ति हुई है। मौजूदा योजनाओं पर कुछ महत्वपूर्ण विचार आमंत्रित किए जाते हैं और वे कौन से परिवर्तन आवश्यक हैं जिनसे हमारे छात्रों की आर्थिक सहायता प्रणालियों की गुणवत्ता में सुधार होगा ताकि, शिक्षण का आकांक्षी प्रत्येक छात्र उच्चतर शिक्षा में प्रवेश कर सके।

विमर्श के प्रश्न

- क्या मौजूदा छात्र-आर्थिक सहायता हेतु आय की विभिन्न श्रेणियां (स्लैब्स) होनी चाहिए?
- स्वीकार्य छात्रवृत्ति के अलावा एक आवश्यक आधरित छात्रवृत्ति को कितने रूपय तक की आय वाले परिवार के लिए शुरू किया जाए।

  एक लाख और कम एक लाख से 1.5 लाख तक 1.5 लाख से 2 लाख तक 2 लाख से 2.5 लाख तक

- क्या उच्चतर शिक्षा की पहुंच में ब्याज ऋण सहायता प्रणाली ने गरीब से गरीब छात्र की सहायता की है? यदि नहीं, तो कौन से परिवर्तन किए जाने की आवश्यकता है?
- मुक्त विश्वविद्यालयों में स्थानीय स्तर पर छात्र सहायता सेवाएं उपलब्ध हैं, स्थानीय निकाय और ऐसी ही अन्य एजेंसियां इन केन्द्रों पर प्रदान की जाने वाली सेवाओं को बेहतर बनाने में किस प्रकार से सहायक हो सकती हैं।
- छात्रों में परस्पर तालमेल बढ़ाने और उन्हें अधिक समावेशी समूह के रूप तैयार करने के लिए किस प्रकार की अवसंरचनात्मक सुविधाएं प्रदान करने की आवश्यकता है?
- छात्रों, विशेष रूप से वंचित समूहों के छात्रों, के लिए किस प्रकार की सहायता शिक्षण-अवसरों की वृद्धि करेगी?
- क्या सहायता को कौशल शिक्षा के साथ जोड़ा जा सकता है?
- जैसाकि सर्वसुलभ छात्रवृत्ति संभव नहीं है जब क्या सर्वसुलभ सॉफ्ट ऋण योजना से छात्रों की सहायता होगी?
- क्या 5 प्रतिशत की ब्याज सब्सीडी पर्याप्त है?
- क्या आप सहमत है कि सभी को छात्रवृत्ति देना संभव नहीं है, तथापि मेधावी छात्रों को उच्चतर शिक्षा के लिए रोका नहीं जाना चाहिए।
- कितनी न्यूनतम प्रतिशतता रखी जाए
- स्नातक
    - 60 प्रतिशत से कम
    - न्यूनतम 60 प्रतिशत
    - न्यूनतम 65 प्रतिशत
    - न्यूनतम 70 प्रतिशत
    - न्यूनतम 75 प्रतिशत

- स्नातकोत्तर
    - न्यूनतम 50 प्रतिशत

- न्यूनतम 55 प्रतिशत
- न्यूनतम 60 प्रतिशत
- न्यूनतम 65 प्रतिशत

XIV: भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देना

सांस्कृतिक एकीकरण, सांस्कृतिक आदान-प्रदान का एक रूप है जिसमें एक समूह स्वयं अपनी संस्कृति की विशेषताओं का त्याग किए बिना अन्य समूह की मान्यताओं, प्रथाओं और रीति-रिवाजों को मानता है। जबकि सांस्कृतिक समन्वयता एक नकारात्मक अर्थ रखती है, सांस्कृतिक एकीकरण को सामान्य तौर पर सकारात्मक रूप में देखा जाता है क्योंकि कुछ भी खोया नहीं है। इस दृष्टिकोण से, सांस्कृतिक एकीकरण दो अदिवतीय संस्कृतियों की मान्यताओं और रीति-रिवाजों का गुणकारी अंतर्मिश्रण है। वे कारक जो सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं उनमें भावी जनसंचार प्रौद्योगिकियां, सरकार की कार्रवाईयां, वैश्विक अर्थव्यवस्था, वैश्विक जन-संचार नेटवर्कों और ट्रांस नेशनल कारपोरेशन की कार्रवाईयों की वृद्धि शामिल है। इन सब में भाषा की भूमिका का प्राथमिक महत्व है। यदि भाषा, एक ओर, हमारी सोचने की प्रक्रिया की संरचना करती है, तो दूसरी ओर, यह हमें मुक्त करती है तथा ज्ञान और कल्पना के अज्ञान क्षेत्रों में हमें आगे बढ़ाती है।

हमे एक बहुभाषी परिप्रेक्ष्य से में भाषा के शिक्षा कार्यक्रमों का पता लगाने की आवश्यकता है। बहुभाषावाद एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जो ज्ञानात्मक लचीलापन और शैक्षिक उपलब्धि के लिए सकारात्मक रूप से संबंधित है। महत्वपूर्ण यह है कि पाठ्यचर्या निर्माताओं, पाठ्यपुस्तक लेखकों, शिक्षकों और माता-पिता बहुभाषावाद के महत्व की प्रशंसा करना शुरू करते हैं, जो छात्रों को अपने चारो ओर सांस्कृतिक और भाषायी विविधता के लिए सुग्राही बनाता है और उन्हें अपनी प्रगति और समग्र विकास हेतु स्रोत के रूप में उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करता है। शिक्षण और अधिगम हेतु शिक्षाशास्त्र को तैयार करते समय, भाषाओं के विशिष्ट लक्षण और संदर्भ जो 'अन्य' निर्देश के तहत आते हैं, छात्रों के लिए ध्यान में रखे जाते हैं।

हमें लघु, अल्पसंख्यक, जनजातीय और विलुप्त भाषाओं के सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों के प्रति ध्यान देना चाहिए। ये भाषाएं समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं और ज्ञान प्रणालियों के भण्डार-गृह हैं और हर संभव प्रयास उन्हें साथ-साथ रखने और जीवन्त बनाने के लिए किए जाने की जरूरत है। यह उनके लिए उच्चतर शिक्षा कार्यढांचा में केवल प्रावधानों को बनाकर ही किया जा सकता है।

अल्प, अल्पसंख्यक और जनजातीय भाषाओं के लाभवंचित वक्ता प्राय: गंभीर रूप से भाषायी अभावग्रस्त होते हैं। हमारे लिए इस बात को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है कि इस देश की अधिकांश भाषाएं, अंग्रेजी सहित, अल्पभाषाओं की कीमत पर नहीं बल्कि केवल उनकी संगति में ही पोषित हो सकती हैं। आदर्शवाद स्थिति यह है कि एक भाषा का विकास अन्य भाषाओं के विकास में भी सहायता करता है, यह इस बात की उम्मीद को बढ़ावा देता है कि भाषाई विविध जनजातीय क्षेत्रों के मामले में, कुछ भाषाओं का विकास शेष भाषाओं को उल्लेखनीय प्रोत्साहन प्रदान कर सकता है और इस दिशा में जानबूझ कर प्रयासरत होने के लिए भाषण समुदायों को प्रोत्साहन दे सकता है। नई संवादशील भूमिकाओं

और कार्यों के आवंटन द्वारा, विशेष तौर पर सभी स्तरों और जनसंचार में शिक्षा के क्षेत्र में इन अल्प, अल्पसंख्यक और जनजातीय भाषाओं के स्तर के प्रयास को और आगे बढ़ावा देना चाहिए जिसके द्वारा यह अधिक सहायक योजना को और अधिक बढ़ावा देगा। अधिकांश भाषाएं विलुप्त हो रही हैं और कुछ भाषाएं बहुभाषावाद और अनुरक्षण के हमारे अपने दावों के बावजूद भारतीय भाषाई दृश्य से वास्तव में लुप्त हो चुकी हैं। हर समय जब हम एक भाषा को खो देते हैं, समूचा साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपरा मिट जाने की संभावना होती है।

बहुभाषावाद, भारतीय पहचान का सार है। यहां तक कि एक दूरस्थ गांव में जिसे तथाकथित एकभाषी कहा जाता है वह प्राय: एक मौखिक प्रदर्शनी की सूची रखता है जो बड़ी संख्या में मिलनसार अभिव्यक्ति पर पर्याप्त कार्य के लिए इसे सुसज्जित रखता है। वास्तव में, भारतीय आवाजों की बहुलता, भारतीय भाषाई और सामाजिक भाषाई मैट्रिक्स में एक दूसरे के साथ सूचना का आदान-प्रदान करती हैं जो भाषाई और सामाजिक भाषाई विशेषताओं की साझा विविधता पर बनाई जाती है।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- क्या विश्वविद्यालयों को सांस्कृतिक एकीकरण पर फाउंडेशन पाठ्यक्रम शामिल करने चाहिएं?
- उच्चतर शिक्षा संस्थाओं में शिक्षा, संस्कृति और भाषा के बीच अंतरसम्पर्क कैसे लाया जा सकता है?
- हम छात्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान को प्रोत्साहन कैसे दे सकते हैं, विशेष तौर पर उन परिस्थितियों में जिनमें वे विभिन्न भाषा समूह और क्षेत्रों से संबंधित हैं?
- क्या आप सोचते हैं कि क्षेत्रीय और राष्ट्रीय भारतीय विद्या केन्द्रों का विकास, विभिन्न क्षेत्रों में भाषाओं के विशाल भंडारगृह के संरक्षण में सहायता करते हैं?
- क्या भारतीय विद्या अध्ययन पाठ्यचर्या का हिस्सा होना चाहिए?
- भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक एकीकरण कैसे हो सकता है?
- क्या सभी विश्वविद्यालयों में मृतप्राय या लुप्तप्राय भाषाओं पर विशेषरूप से केन्द्रित अनिवार्य भाषा विभाग होने चाहिएं?

XV: निजी क्षेत्र के साथ भागीदारी का अर्थ

विस्तार, समावेश और सार्वजनिक खर्च बढ़ाने, निजी सहभागिता को प्रोत्साहन देने और लम्बे समय से अपेक्षित सुधारों को शुरू करने के रूप में गुणवत्तापरक पूर्णतया उच्चतर और तकनीकी शिक्षा प्रणाली में तेजी से सुधार उच्चतर शिक्षा हेतु विभिन्न पहलों के मूल को बनाते हैं। उच्चतर शिक्षा केवल सार्वजनिक निधियन के माध्यम से पोषित नहीं की जा सकती। एक बड़े पैमाने पर आवश्यकता को देखते हुए, सार्वजनिक स्रोत, गुणवत्तापरक उच्चतर शिक्षा हेतु बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते और हमारी नीति और विनियमित कार्यढांचे को उच्चतर और तकनीकी शिक्षा क्षेत्र में निजी निवेश और सार्वजनिक निजी भागीदारी (पीपीपी) को आकर्षित करने के लिए आवश्यक समर्थन कार्यढांचा प्रदान करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पीपीपी, वृहत स्रोत अंतरालों को पूरा करने के अलावा, स्रोत-उपयोग दक्षता, सेवा डिलीवरी में सुधार और उत्कृष्टता के प्रोन्नयन हेतु एक उपकरण के रूप में भी उपयोग में लाई जा सकती है। गुणवत्तापरक सार्वजनिक सेवाओं के प्रावधान हेतु सार्वजनिक निवेशों में वृद्धि करने और सार्वजनिक कोष पर निर्भरता कम करने के अलावा, पीपीपी निम्नलिखित दक्षता लाभ को भी पूरा करती है:

- जोखिम साझा करने और उच्च उत्पादकता तथा इष्टतम जोखिम आवंटन के लिए अग्रणी संसाधनों के कुशल उपयोग के माध्यम से लागत-प्रभावशीलता को बढ़ावा देना;
- बेहतर परियोजना डिजाइन, कार्यान्वयन, संचालन और प्रंबधन के लिए अग्रणी आधुनिक प्रौद्योगिकी की पहुंच को बढ़ावा देना;
- ग्राहक पर बल देने के माध्यम से जवाबदेही को बढ़ावा देना, जो, बदले में, गुणत्तापरक सार्वजनिक सेवा के त्वरित और बेहतर डिलीवरी में परिणाम देता है।
- सार्वजनिक निधियों पर निर्भरता कम करके और निर्णय करने में बाह्य हस्तक्षेप को महत्वपूर्ण रूप से कम करने की प्रक्रिया में संस्थागत स्वायत्ता को बढ़ावा देना, क्योंकि यह वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर और स्वतंत्र बना करके सार्वजनिक संस्थाओं को सशक्त बनाता है।

निजी क्षेत्र भागीदारी को आरक्षण और सकारात्मक कार्रवाई के संबंध में सरकारी नीतियों का अनुपालन सुनिश्चित करना चाहिए। महत्वपूर्ण रूप से पीपीपी प्रणाली के तहत स्थापित संस्थाएं बिल्कुल दाखिला प्रक्रिया का अनुसरण करेगी जिसके द्वारा यह सुनिश्चित करना है कि शिक्षा की कीमत को जुटाने की असमर्थता के कारण किसी को भी दाखिले में मना नहीं किया जाए। उदार छात्रवृत्ति प्रावधान, छात्र ऋण और ब्याज सब्सिडी योजना को उच्चतर शिक्षा में निजी भागीदारी बनाने के लिए गुंजाइश के रूप में सोचा जा सकता है। यह नोट करना आवश्यक है कि निजी क्षेत्र के साथ भागीदारी का अर्थ शिक्षा का निजीकरण, व्यावसायिकरण और अधोगति नहीं है बल्कि यह मेरिट अच्छी होने के कारण शिक्षा के समग्र कार्य ढांचे के भीतर निर्णय करने में निजी निवेश और भागीदारी करने की संभावनाओं की खोज करता है, जबकि सरकार सभी के लिए गुणवत्तापरक उच्चतर और तकनीकी शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए सतत रूप से जिम्मेवार है। इस प्रकार, पीपीपी पद्धति के तहत, उत्कृष्टता, सामाजिक न्याय, समावेश के साथ महिला पुरूष, क्षेत्रीय और सामाजिक समूह की असमानताओं को दूर करना के पोषित

राष्ट्रीय लक्ष्य, सिद्धान्तों का मार्गदर्शन करने के लिए सतत रहेगी। इसका अर्थ यह है कि सरकार की नीति उपकरणों को निधियन और सक्षम, सुसाध्य, वित्तीय और विनियमित के कारण विस्तृत भूमिका मानते हुए नियंत्रण करने की वर्तमान भूमिका में संशोधित किया जाना अपेक्षित है।

यह इसी पृष्ठभूमि के अनुसार है कि उच्चतर शिक्षा संस्थाओं को निजी क्षेत्र भागीदारी की नीति में इस रूप में शिफ्ट करने की आवश्यकता है कि विस्तार के व्यापक लक्ष्यों, समावेश और गुणवत्ता का अनुरक्षण किया जाए।

जबकि उच्चतर शिक्षा में सार्वजनिक निजी भागीदारी का एक कार्यनीति के रूप में चलाई गई है फिर भी अधिकांश सफल परिणाम दर्शाए नहीं गए। अत: पीपीपी मॉडलों पर दुबारा तैयार किए जाने की आवश्यकता है ताकि अधिक अर्थपूर्ण सहयोग को अनुमति दी जा सके। उच्चतर शिक्षा में पीपीपी का एक विवेचित विशलेषण, विद्यमान कानूनी प्रावधान और संभव व्यवहार्य मॉडल को आगे दे जाने की आवश्यकता है।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- शिक्षा क्षेत्र में क्यों पीपीपी मॉडल अधिक प्रभावी नहीं रहा है।
- क्या सहायक सेवाओं को प्रदान करने के अतिरिक्त निजी क्षेत्र के लिए कोई और भूमिका हो सकती है।
- क्या आप बेहतर पीपीपी व्यवस्थाओं के लिए सुरक्षा उपायों के साथ “लाभ के लिए नहीं” नीति में परिवर्तन का सुझाव देंगे।
- क्या पीपीपी सामान्य शिक्षा के लिए नहीं बल्कि केवल तकनीकी/व्यावसायिक शिक्षा के लिए संगत है।
- क्या उच्चतर शिक्षा में पीपीपी के बेहतर कार्य मॉडल हैं जिन्हें फिर से दोहराया जा सकता है।
- निजी क्षेत्र के साथ भागीदारी में क्या किया जाना चाहिए?
    1. भवनों का निर्माण
    2. भवनों का रख-रखाव
    3. कॉलेजों का रख-रखाव
    4. प्रयोगशालाओं का रख-रखाव
    5. 1 और 2 दोनों
    6. 1 और 3 दोनों
    7. 2
    8. 1 और 4 दोनों
- निम्नलिखित में कौन-कौन से परिवर्तन स्वीकार्य हैं? (आप एक से अधिक पर सही का निशान लगा सकते हैं)
- सुविधाओं का प्रबंधन
- कॉलेजों को सीएसआर के तहत ट्रस्ट / कॉर्पोरेट फार्मों द्वारा अपने नियंत्रण में लेना
- कॉर्पोरेट द्वारा लाभ निरपेक्ष (नॉन-प्रोफिट) कॉलेज / विश्वविद्यालय खोलना
- निजी क्षेत्र द्वारा अपने शासी निकाय में श्रेष्ठ प्रोफेसरों/सहायक प्रोफेसरों को रखना।

XVI. उच्चतर शिक्षा का वित्तपोषण

विविध और विशाल राष्ट्र में सार्वजनिक निधियन की स्वयं की अपनी सीमाएं और बाधाएं हैं जिससे कि संसाधन छोटे-छोटे रूप में बिखर जाते हैं यदि नामांकन में बड़े पैमाने पर विस्तार के लक्ष्यों को पूरा किया जाना है। सार्वजनिक निधियन उच्चतर शिक्षा की शीघ्रता से बढ़ती हुई लागत के साथ गति नहीं कर सकता। छात्रों की संख्या में विस्तार प्रमुख चुनौती को प्रस्तुत करता है जिसमें समावेशिता का लक्ष्य शामिल करते हुए सभी वर्गों को पहुंच प्रदान करने का उद्देश्य है और जिसके द्वारा उच्च रूप से सहायता प्राप्त तृतीय शिक्षा को संचालित करना है। वित्तीय शर्तों के अनुसार यह अस्थिर मॉडल बन गया है। परम्परागत रूप में शिक्षा को सार्वजनिक बेहतर, शिक्षित नागरिकों के माध्यम से समाज को योगदान देने, मानव पूंजी को सुधारने और आर्थिक सुधार का संवर्धन करने के रूप में देखा गया है। व्यक्तिगत भलाई के रूप में उच्चतर शिक्षा को देखने का दबाव बढ़ता जा रहा है जिसमें व्यक्तियों को अधिक से अधिक लाभ हो सके जिसका निहितार्थ यह है कि अकादमिक संस्थाएं और उनके छात्रों को उच्चतर शिक्षा की लागत के एक महत्वपूर्ण हिस्से का भुगतान करना चाहिए। ''अधिक संख्या में निधियन होने'' के कारण धियन कमियों का आशय यह भी है कि उच्चतर शिक्षा प्रणाली और संस्थाएं स्वयं अपने राजस्व के बड़े प्रतिशत को उत्पन्न करने के लिए बड़ी मात्रा में जिम्मेदार रही हैं।

वित्तीय शिक्षा का भविष्य केवल वर्तमान का विस्तार नहीं हो सकता बल्कि जनसांख्यिकी लाभांश के प्रोन्नयन के लिए नामांकन में बड़े पैमाने पर वृद्धि का अनुमान, लागत-शेयरिंग में नई प्रणालियां जो छात्र के भार को कम करती हैं जैसी नई वास्तविकताओं द्वारा आकार दिए जाने की आवश्यकता है और ठीक इसी समय पर प्रदाता के रूप में सरकार, निजी और सार्वजनिक शिक्षा प्रदाता के विभिन्न प्रकार के निर्गमन और वृद्धि, शिक्षा का डिलीवरी की पद्धतियों में नवाचारों इत्यादि पर एकमात्र भरोसा नहीं रखती। शिक्षा में वित्तीय मुद्दों का सामना करने के इन वास्तविकताओं, नए और लचीले तरीकों को निरंतर जारी रखने की आवश्यकता है।

12वीं योजना का दृष्टिकोण पत्र यह उल्लेख करता है कि सभी सरकारी शिक्षा का लगभग 18% खर्च हो रहा है या आज जीडीपी का लगभग 1.12% उच्चतर शिक्षा पर खर्च किया जाता है। यह क्रमश: 25% और 1.5% तक बढ़ना चाहिए। जीडीपी के 0.38% की बढ़ोतरी का अर्थ केन्द्र और राज्य दोनों को शामिल करके उच्चतर शिक्षा के लगभग 25000 करोड़ रूपए का अतिरिक्त आबंटन है। इसे बार-बार दोहराया गया है कि हम जीडीपी का कम-से-कम 6% शिक्षा पर खर्च करें।

संघ(केन्द्र) और राज्य सरकार के बीच भारत में उच्चतर शिक्षा के निधियन में जिम्मेवारियों की उचित साझेदारी होनी चाहिए। जबकि केन्द्र सरकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से यूजीसी निधियों के माध्यम से केन्द्रीय विश्वविद्यालयों को सम्पूर्ण निधि देती है, केवल राज्य विश्वविद्यालय और कॉलेजों का व्यय विकास संघ सरकार द्वारा वित्त पोषित किया जाता है।

चूंकि उच्चतर शिक्षा पूरे समाज के लिए सामाजिक लाभ का विस्तृत सेट प्रस्तुत करती है, छात्र शुल्क पर महत्वपूर्ण रूप से निर्भर रहना उच्चतर शिक्षा संस्थाओं से उम्मीद करने का कोई औचित्य नहीं है। पूर्व समितियों ने सुझाव दिया है कि वे छात्र शुल्क और अन्य स्रोतों के माध्यम से बजट आवश्यकताओं का लगभग 20% उत्पन्न करने के लिए इन संस्थाओं को अनुमति दें। सीएबीई समिति (2005) ने सुझाव दिया है कि यह 20% उच्च सीमा के रूप में देखा जा सकता है ताकि उच्चतर शिक्षा के विचाराधीन समतुल्यता का कारोबार न किया जाए।

मजबूत उच्च शिक्षा प्रणालियां विशेषरूप से पूर्व छात्रों सहित कॉरपोरेट सेक्टर और व्यक्तियों से चंदा और अक्षय निधि के माध्यम से बड़े पैमाने पर समाज द्वारा उदार निधियन और समतुल्य उदार निधियन के साथ विश्व के उन्नत क्षेत्रों में विकसित की जाती हैं। शुल्क के रूप में छात्र योगदान अपेक्षाकृत निधियों के एक अल्प स्रोत का निर्माण करता है। भारत में एक कार्यढांचा विकसित करना आवश्यक है जो निधियों-गैर-राज्य और गैर-छात्र क्षेत्र के इस अनुपलब्ध स्रोत को विकसित करता है। इसके अलावा कॉरपोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व अधिनियम के कुछ प्रावधानों को जोड़ते हुए विशेषरूप से उच्च शिक्षा क्षेत्र में, उच्च शिक्षा के व्यक्तिगत और कॉरपोरेट चंदे और अक्षय निधि को बढ़ावा देने के नवाचारी तरीकों की खोज किए जाने की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा संस्थानों को समतुल्य अनुदान की एक उचित प्रणाली तैयार करने की आवश्यकता है।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- उच्चतर शिक्षा के वित्त पोषण के नवाचारी तरीके क्या हैं?
- जब राज्य वित्त पोषण शिक्षा के अपने हिस्से को बढ़ाने में सक्षम नहीं होते तब कैसे स्थिति में सुधार किया जा सकता है?
- कैसे कॉरपोरेट क्षेत्र की भागीदारी को उच्च शिक्षा के वित्त पोषण की समस्याओं को कम करने में मदद कर सकते हैं?
- क्या छात्र शुल्क संरचना का परिवर्तनशील होना वांछनीय है?
- कोई अन्य सुझाव हैं जो उच्चतर शिक्षा के वित्त पोषण के मुद्दों को हल कर सकते हैं?
- क्या सभी शैक्षणिक ऋणों पर 5 प्रतिशत की ब्याज सहायिकी (सब्सिडी) और 01 वर्ष की ऋण स्थगन अवधि दी जानी चाहिए?
- यदि अतिरिक्त पढ़ाई की जाती है तब क्या क्रमिक ऋण स्थगन और अतिरिक्त ऋण उपलब्ध करवाया जाना चाहिए।?
- क्या प्रत्येक संस्थान को किसी भी छात्रवृत्ति द्वारा ना कवर किए गए 1 प्रतिशत मेधावी और 1 प्रतिशत जरूरतमंद छात्रों को भूतपूर्व छात्रों के योगदान, निधि जुटाकर कवर किया जाना चाहिए?
- क्या प्रत्येक संस्था को भूतपूर्व छात्रों से धन राशि जुटाने और स्थानीय योगदान लेना चाहिए।

XVII. उच्चतर शिक्षा का वैश्वीकरण

वैश्वीकरण का परिणाम है बार्डर पार उच्चतर शिक्षा तक अधिक पहुंच। तथापि, एक अच्छी नीति की आवश्यकता है जो सहयोगों, छात्र संकाय गतिशीलता इत्यादि को प्रोत्साहित करती है। अन्तर्राष्ट्रीयकरण के दो स्वरूप हैः एक परम्परागत और दूसरा आधुनिक। परम्परागत स्वरूप कोर शैक्षिक मूल्यों पर बल देता है जबकि आधुनिक क्रियात्मक भागों के रूप में निर्यात/आयात और आर्थिक लाभों सहित अन्तर्राष्ट्रीय व्यवसाय के कार्यढांचे में शिक्षा पर मुख्यतया ध्यान देने की ओर अग्रसर होता है। परम्परागत स्वरूप छात्र गतिशीलता पर अधिक बल देता है कुछ सीमा तक नीति के रूप में सेकाय गतिशीलता पर बल देता है जबकि आधुनिक स्वरूप के अन्तर्गत व्यवसाय मॉडल तैयार किए जाते हैं जो न केवल छात्र और संकाय गतिशीलता अपितु आर्थिक लाभ कमाने के लिए सभी प्राथमिक विचारों सहित संस्थागत गतिशीलता और कार्यक्रम गतिशीलता को शामिल करता है। यह अनिवार्य है कि विश्वविद्यालयों में शिक्षण, अनुसंधान और बौद्धिक पर्यावरण में गुणवत्ता को बढ़ाने के उद्देश्य से पहले के मॉडल पर मुख्यतया बल दे जिसके परिणाम से अच्छा ज्ञान, उत्पादन एवं प्रचार-प्रसार हो।

भारतीय छात्रों और संकाय के साथ शिक्षण एवं अनुसंधान को शेयर के लिए विदेश के चुनिन्दा संस्थाओं की कुछ उच्च गुणवत्ता निर्धारण हेतु चयनात्मक सौद्देश्य पहुंच को अपनाना और उन्हें भारत आने के लिए आमंत्रित करना है। साथ ही इन संस्थाओं के लिए एकल या दोहरी डिग्री कार्यक्रम प्रदान करने एवं परिसर स्थापित करने हेतु इन संस्थाओं के लिए संचलनात्मक वातावरण प्रदान करने की आवश्यकता है।

जबकि उच्चतर शिक्षा की सभी भारतीय संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाए लेकिन यह अच्छा होगा कि ऐसे कार्यक्रमों में चुनिन्दा विदेशी संस्थाओं के सहयोग से देश में कुछ उत्तम संस्थाओं का निर्धारण किया जाए। अन्य बातों के साथ-साथ छात्र और संकाय आदान-प्रदान को सरल बनाने के लिए इस संबंध में भारतीय संस्थाओं को अतिरिक्त अपेक्षित सहायता प्रदान की जाए। इसी प्रकार सभी नहीं लेकिन संभावित उच्च गुणवत्ता वाली कुछ संस्थाओं को विदेश में परिसर स्थापित करने और ऐसे कार्यक्रम जिनमें भारत का तुलनात्मक लाभ हो कार्यक्रम प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

हमारे विश्वविद्यालय परिसरों में विदेश से उत्तम मेधावी छात्रों को आकर्षित करने के लिए कदम उठाए जाने हैं। इस संबंध में मेरिट मुख्य महत्व होना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो ऐसे मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान की जानी चाहिए। विभिन्नात्मक शुल्क नीतियां (विदेशी छात्रों के लिए) ध्यानपूर्वक तैयार की जानी चाहिए। यहां तक कि विदेशी छात्रों से भी उनकी शिक्षा के लागत के 100/- से अधिक वसूल करने का कोई औचित्य नहीं है। यह देखना अनिवार्य है कि विदेशी छात्रों को राजस्व प्रापत् करने के स्त्रोत के रूप में न देखा जाए अपितु अध्ययन वातावरण बढ़ाने के स्त्रोत के रूप में देखा जाए। विदेशी छात्रों की पर्याप्त संख्या रखने वाले भारतीय विश्वविद्यालयों को भी विदेशी छात्रों के लिए उत्तम आवासीय सुविधाएं रखने के लिए अतिरिक्त स्रोतों की सहायता करने की जरूरत है।

अन्तर्राष्ट्रीयकरण के पूर्व क्षेत्र में इन बातों पर ध्यान देना चाहिएः

(क) शैक्षिक महत्व, वाणिज्यिक हितों द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किए जाएं।
(ख) घरेलू मांग और विदेशी छात्रों की मांग को समान रखा जाए।
(ग) प्रत्यायन एवं गुणवत्ता आश्वासन के मजबूत तंत्र को सुनिश्चित करना।
(घ) विदेशी विश्वविद्यालयों की दूषित और अनुचित प्रतिस्पर्द्धा से उच्चतर शिक्षा की भारतीय संस्थाओं को बचाना।
(ड.) विदेशी शैक्षिक उपक्रमों की पाठ्यचर्या और एसोसिएट मूल्यों एवं कार्यों के संभव घुसपैठ से भारतीय मूल्यों की सुरक्षा करना, प्रोन्नत करना एवं प्रोत्साहित करना।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- सीमा पार उच्चतर शिक्षा के लिए कृपया नीतियों का सुझाव दें।
- हम विदेशी शिक्षा प्रदाताओं को कैसे प्रोत्साहित कर सकते हैं?
- विश्वविद्यालय परिसरों में छात्र सुविधा केन्द्र, अन्तर्राष्ट्रीय छात्र-छात्रावास, अधिक विदेशी छात्रों को आकर्षित करने में सहायता करने के लिए संकाय अतिथि घर जैसी अवसंरचना सुविधाओं का सुधार किया जा सकता है।
- छात्र संकाय आदान-प्रदान कार्यक्रमों और संस्थागत/अनुसंधान सहयोगों में परिवर्तन के सुझाव दें।
- उन तरीकों का सुझाव दे जिनसे शैक्षणिक सेवाओं का निर्यात किया जा सकता है?
- कौन से राज्य का विश्वविद्यालय 10 प्रतिशत अन्तर्राष्ट्रीय छात्रों को प्रवेश दे सकता है?
- क्या उनके पास पर्याप्त रैंकिग और विभिन्नताएं आदि हैं?
- किन विश्वविद्यालयों को 5 वर्ष की अवधिमें अन्तर्राष्ट्रीय छात्र पाने के प्रयास करने चाहिए?
- क्या इन विश्वविद्यालयों को ग्लोबल इनिशिएटिव इन एकेडमिक नेटवर्क (जीआईएएन) विद्वान/अध्यापक प्राप्त होने चाहिए?

XVIII: नियोजनीयता से शिक्षा को जोड़ने के लिए उद्योग के साथ विनियोजन

भारत जहां एक ओर उच्चतर शिक्षा स्नातकों की अधिक आपूर्ति के विशिष्ट मामले प्रस्तुत करता है वहीं दूसरी ओर उत्पादन क्षेत्र में भावी कर्मचारियों की अनुपलब्धता समझता है। ऐसे बेमेल का मूल आधार श्रम बाजार में प्रदत्त कौशल और अपेक्षित कौशल के बीच का अंतर है। विश्वविद्यालय और उच्चतर शिक्षा संस्थाएं परस्पर अंत:क्रियाओं और विनियोजनों के लिए बहुत थोड़े प्रयोजन से स्वतंत्र रूप से परिचालित हैं।

पिछले दशक में 'अधिगम' का 'नियोजनीय कौशल' तक विस्तार एक उपलब्धि थी। हमारे छात्रों की नियोजनीयता चिंता का विषय है। उद्योग सही तरह के नियोजनीय कौशल की अपेक्षा में हमारी शिक्षा से आ रहे स्नातकों से निराश हैं। यद्यपि भारत की शिक्षा प्रणाली विश्व की सबसे बड़ी शिक्षा प्रणालियों में से एक है लेकिन, स्नातकों की नियोजनीयता आज देश में सामना की जा रही बड़ी चुनौतियों में से एक के रूप में अक्सर उद्धृत की जाती है।

शिक्षित और नियोजनीय मानव संसाधन की आपूर्ति का भारी अंतर एवं देश के श्रम बाजार में इसकी मांग अवश्य ही प्रारम्भिक चेतावनी का संकेत है। एनएएसएससीओएम की रिपोर्ट के अनुसार भारत के एक चौथाई इंजीनियरी स्नातक और इसके केवल 10% की अन्य स्नातक हैं। पर्पल लीप द्वारा किया गया हाल ही का अध्ययन बताता है कि नियोजन योग्य इंजीनियरी कॉलेजों के II, III और IV पंक्ति एक तिहाई इंजीनियर मध्यस्थ प्रशिक्षण के बाद भी नियोजन योग्य नहीं हैं; II, III और IV श्रेणी के कॉलेजों के नियोजन योग्य स्नातक श्रेणी इंजीनियरी कॉलेजों के कुल मेधावी पूल की संख्या के बराबर हैं जो (आईआईटी और आईआईएस) देश के इंजीनियरी स्नातकों के संयुक्त योगदान के 1% से कम है। 10 से क्रम में I और II श्रेणी के शहरों के बीच तकनीकी स्नातकों के नियोजन के बीच का अंतराल चिंता की बात है। देश में अधिकांश उच्च वृद्धि के तकनीकी क्षेत्रों के लिए यह अंतराल लगभग 50% है। अन्य विषयों के स्नातकों के मामले में यह स्थिति और खराब है। भारत श्रम रिपोर्ट के अनुसार भारत में केवल 46 प्रतिशत स्नातक और कामगार ही नियमित रूप से नियोजित हैं।

वर्णक्रम के दूसरी ओर शोध में व्यापक निवेश की आवश्यकता है। उद्योग शैक्षिक जगत संयोजना बढ़ती हुई नियोजनीयता की उपलब्धि के साथ-साथ आवश्यकता के दोनो तरीकों को पूरा करने के लिए अनिवार्य है। जबकि इस दिशा में हमारे विभिन्न प्रयास हैं। इनका वैसे निषिक्तकरण नहीं किया गया जैसी आशा की गई है। हमें यह पता लगाने की जरूरत है कि अधिक भागीदारी के लिए कैसे और क्या आवश्यक है?

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- क्या उच्चतर शिक्षा संस्थाओं को उद्योग द्वारा अपेक्षित कौशल प्रदान करने के अनुकूल होना चाहिए?
- अध्ययन कार्यक्रमों को बदलने एवं इसके स्नातकों की नियोजनीयता को सुधारने के लिए उद्योग के साथ उच्चतर शिक्षा को कैसे जोड़ा जा सकता है?
- शुरूआत करने एवं उद्यमशीलता के लिए उद्योग शैक्षिक जगत कैसे सहायता कर सकता है?
- उद्यमशीलता कौशलता विकसित करने के लिए उद्योग छात्रों को कैसे प्रेरित कर सकता है?
- क्या उद्योग के प्रतिनिधियों को विश्वविद्यालयों/कॉलेजों के शासी निकायों में शामिल किया जाना चाहिए?
- छात्र की नियोजनीयता बढ़ाने के लिए उद्योग से संबंधित पाठ्यक्रमों को तैयार करने में उद्योग कैसे सहायता कर सकता है?
- क्षेत्र और सेक्टर विशिष्ट भिन्न कौशल प्रोफाइल और संस्थागत प्रोफाइल का सृजन एवं मेल कैसे किया जा सकता है?
- क्षेत्र और सेक्टर विशिष्ट भिन्न कौशल प्रोफाइल और संस्थागत प्रोफाइल का सृजन एवं मेल कैसे किया जा सकता है? हम यह कैसे सुनिश्चित करें कि कृषि और पारम्परिक कला और शिल्प उद्योग/ क्षेत्र की अनदेखी नहीं की गई है?

XIX: अनुसंधान एवं नवाचार को प्रोन्नत करना

राष्ट्र की प्रगति विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में शिक्षा एवं अनसंधान की स्थायी बढ़ोतरी पर निर्भर करती है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हमारे अनुसंधान को उपलब्धि प्राप्ति के मानकों की शर्तों पर अन्तर्राष्ट्रीय साम्यता स्वीकार करनी चाहिए। यह तभी होगा जब हम देशज विचार और आवश्यकता के आधार पर शिक्षा एवं अनुसंधान में हमारी प्राथमिकताओं एवं कार्यक्रमों को निर्धारित करें और अन्य देशों द्वारा निर्धारित प्रथाओं का अनुगमन करें। विज्ञान का विकास हमारी सांस्कृतिक परम्परा और आंतरिक संसाधन के आधार अपना पोषण करें। वैज्ञानिक भाव और सृजनात्मक विचार की प्रक्रिया स्कूल शिक्षा के प्रारंभिक स्तर पर शुरू की जानी चाहिए। शैक्षिक संगठन और अवसंरचना की बाधाओं की कमी का खामियाजा स्कूल स्तर पर विज्ञान शिक्षण स्त्रोत उठाता है।

इसके अतिरिक्त, भारतीय शिक्षा और अनुसंधान की प्रमुख कमजोरी, भारतीय अनुसंधान के कुल योग में विश्वविद्यालयों द्वारा निभाई गई अपेक्षाकृत अल्प भूमिका है। भारतीय विश्वविद्यालय अधिक शिक्षण केन्द्रित है। शिक्षकों और छात्रों के लिए अधिक से अधिक अनुसंधान कार्य और बेहतर गुणवत्ता के निष्पादन की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त निजी विश्वविद्यालयों की प्रचुरता विश्विद्यालयों के गम्भीर शिक्षण कार्य पर जोर देता है। उनमें से अधिकांश में न तो सुविधाएं हैं और न ही अनुसंधान शुरू करने का अनुकूलन है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की शिक्षकों, अनुसंधान कार्यकर्ताओं, प्रयोगशाला तकनीशियनों को सहायता देने की योजना अपर्याप्त है और उसका दर्जा बढ़ाने एवं उसे पुनः कार्यनीतिक बनाने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों को बुनियादी अनुसंधान को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और अनुप्रयुक्त अनुसंधान और विज्ञान की सभी शाखाओं के विकास की जिम्मेदारी अन्य संस्थाओं पर छोड़ देनी चाहिए। निजी एजेंसियों के विश्वविद्यालय पद्धति में अनुसंधान के लिए और अधिक निधि और सार्वजनिक क्षेत्र सहित आर एवं डी की लागत पर भागीदारी करनी चाहिए।

सरकार विश्वविद्यालयों में अनुसंधान और नवाचारों को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक कदम उठा सकती है। प्रचुर कलाओं में अनुसंधान एवं सामाजिक विज्ञानों की प्रोन्नति करना जिसमें अंतःविषयक अनुसंधान भी महत्वपूर्ण है। अनुसंधान आगे बढ़ाने के लिए सर्जनात्मक सहायक परिस्थितियों के लिए सरकार की सहायता की जरूरत है। सरकार से आर एण्ड डी कार्यकलापों के लिए अपने आबंटनों को बढ़ाने की आवश्यकता है। संस्थागत स्तर पर शिक्षण अनुसंधान से जोड़ने की जरूरत है। सरकार को संकाय विकास में निवेश करने और अनुसंधान में संस्थाओं के बीच सहयोगी प्रयासों को प्रोन्नत करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करने की आवश्यकता है।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- छात्रों और संकाय सदस्यों में अनुसंधान और नवाचार की प्रवृत्ति कैसे विकसित की जानी चाहिए?
- शिक्षकों और छात्रों की अनुसंधान क्षमताओं को विकसित करने के लिए क्या कदम उठाने की आवश्यकता है?
- किस तरह से उच्चतर शिक्षा स्तर पर अनुसंधान कार्यवृत्त को प्राथमिकता दी जानी चाहिए?
- निजी एजेंसियों को विश्वविद्यालय अनुसंधान और नवाचार कार्यकलापों में निधि का निवेश करने के लिए कैसे प्रोत्साहित और प्रेरित किया जा सकता है?
- अनुसंधान एवं नवाचार को प्रोन्नत करने के लिए निम्नलिखित नीतियों में से किन्हें आगे बढ़ाने की जरूरत है?
    - परिणाम आधारित अनुसंधान वित्तपोषण
    - सामाजिक विज्ञान विषयों एवं बुनियादी दोनों के लिए उदार अनुसंधान अनुदान
    - नवाचार अनुसंधान के लिए मूल राशि सहित इनक्यूबेशन केन्द्र स्थापित करना।
    - केन्द्रीय शैक्षिक संस्थाओं में अनुसंधान पार्क स्थापित करना।
    - संकाय की संयुक्त नियुक्ति- अनुसंधानकर्ताओं को पढ़ाने और अध्यापकों को अनुसंधान करने में समर्थ बनाती हैं।
    - अन्तः विषयक अनुसंधान विद्यमान विषयों के अंतरानुभागीय स्तर पर नए ज्ञान के सृजन के लिए संस्थाओं को एकजुट कार्य करना चाहिए।

- हम भारत को आरएंडडी परियोजनाओं के लिए पसंदीदा स्थान कैसे बना सकते हैं? हम आरएंडडी के लिए विदेशों से अनुदान प्राप्त करने की संभावनाएं कैसे तलाश सकते हैं?
- क्या हमें नवाचारी विश्वविद्यालयों की स्थापना पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है?

नया ज्ञान

ज्ञान अर्थव्यवस्था, ज्ञान का सृजन एवं प्रचार प्रसार करने तथा इसका आर्थिक प्रयोग उन्नति और बढ़े हुए जीवन स्तर के लिए है। ज्ञान अर्थव्यवस्था की विशेषताओं और गतिकी को समझना महत्वपूर्ण है तथा भारत के आर्थिक विकास का एक मार्ग तैयार करना है जिसमें ज्ञान प्रबंधन एक मुख्य भूमिका ग्रहण करता है। ज्ञान अर्थव्यवस्थाएं बिल्कुल अरक्षित बन गई हैं और बाहरी ताकतों के लिए खुली हैं तथा अवसरों का दोहन एवं धमकियों को कम करने हेतु आंतरिक तंत्रो के सृजन की आवश्यकता है।

अत: ज्ञान अर्थव्यवस्था में शिक्षा और कौशल सम्पन्न मानव संसाधन को महत्वपूर्ण माना जा सकता है क्योंकि केवल मानव संसाधनों द्वारा ही ज्ञान का निर्माण किया जा सकता है जो बाद में ज्ञान को ठोस उत्पादों-मार्किट के लिए प्रौद्योगिकी, सामान एवं सेवाओं के रूप में परिवर्तित कर सकता है। इसलिए शिक्षित एवं कौशल कार्यबल से भरपूर किसी देश में उन्नति बढ़ाने के लिए उत्पाद प्रचार प्रसार उसे ज्ञान के अनुकूल बनाने की बहुत संभावनाएं होती है। यह इसी कारण से है कि 18-24 आयु वर्ग के शिक्षित युवा ज्ञान के लाभ प्राप्त करने के लिए ज्ञान अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण सूचकांक हैं। विश्वभर में बदलती जनांकिकी संरचना ने विकासशील देशों विशेषतया भारत एवं चीन के पक्ष में केन्द्र तथा परिधि के लिए विकास के उदाहरण बदल दिए है जिसमें कुल जनसंख्या में उच्च शिक्षित युवाओं (यदि अनुपात नहीं) की बहुत संख्या है।

तथापि किसी देश का मानव संसाधन अधिक सम्पन्न होते हुए भी, किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास की गारंटी नहीं है। इसका कारण यह है कि जो अभी तक शिक्षित और कौशल मानव संसाधन सचल नहीं था, बहुत सचल बन गया है और इसलिए मानव संसाधनों का उपयोग मूल देश तक विशिष्ट नहीं हो सकता है। ज्ञान का निर्माण एवं उपयोग उन देशों द्वारा हो सकता है जो प्रतिभा को आकर्षित कर सकते हैं, उभरती वैश्विक श्रम मार्किट ने विशेषज्ञता और कौशलों तक पहुंच सुलभ बना दी है और एक तरफ व्यवसायिकों को ज्ञानयुक्त बना दिया है तथा प्रतिभा पलायन एवं उन्नत मानव पूंजी के नुकसान के खतरों का निर्माण कर दिया है। भारत सहित अनेक विकासशील देश इस साधन सम्पन्न घटक और ज्ञान अर्थव्यवस्था में इसके उपयोग के इस द्विभाजन से पीड़ित हैं।

आईसीटी क्रान्ति ने ज्ञान अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण आयाम जोड़ा है। क्या इस आईसीटी क्रान्ति से व्यवसायिकों की सचलता असम्बद्ध अथवा अधिक महत्वपूर्ण असीमितता में लुप्त हो रही है या बढ़ रही है? एक ऐया देश जो डिजीटलीकरण करके और यहां तक कि विभिन्न उपयोगों के लिए आईटी का प्रयोग करके बढ़े हुए नेटवर्किंग का विकास कर रहा है, सूचना को ज्ञान में बदलने तथा इसे आदान-प्रदान के उत्पाद के रूप में ज्ञान की उपयोगिता बढ़ाने के द्वारा बदलने हेतु मेधा आकर्षित करने की बहुत संभावनाए हैं। इस प्रकार से जहां कहीं सूचना नेटवर्क मजबूत है और व्यवसायिकों के पास यह महत्वपूर्ण उपकरण है, वे ज्ञान उत्पादन में नेटवर्किंग का प्रयोग करने की बेहतर स्थिति में हैं, इस संबंध में ज्ञान बांटना, डिजीटल बांट से ही आता है। अत: आईसीटी, उत्पाद के लिए अर्थव्यवस्था की संभावना

बढ़ाकर और शिक्षित एवं कौशल मानव संसाधनों विशेषकर व्यवसायिकों द्वारा ज्ञान का उपयोग करके ज्ञान अर्थव्यवस्था के प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण आयाम जोड़ती है।

ज्ञान अर्थव्यवस्था व्यवसायिकीकरण और विपणन का एक महत्वपूर्ण आयाम है, यह तर्क दिया जाता है कि ज्ञान की सुरक्षा, उत्पादन के लिए निर्माताओं के ज्ञान के लिए एक प्रोत्साहन प्रदान करेगी। ''ज्ञान'' अथवा ''नवीकरण'' जो किसी ठोस सामान या उत्पाद के रूप में आता है, जिसकी सुरक्षा की जाती है का एक मूल्य भी होता है जिसे ज्ञान के उपयोगकर्ता से लिया जा सकता है। इस प्रकार से नवीकरण को ज्ञान अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्तंभ माना जाता है। इसका अर्थ है कि उन्हें अपने ज्ञान को बदलने अर्थात मस्तिष्कों में निहित ज्ञान को एक स्पष्ट ज्ञान के रूप में, एक ऐसे रूप में जिसमें इस पर व्यापार किया जा सके, के प्रयास करने होंगे।

ज्ञान अर्थव्यवस्थाओं ने अंर्तनिर्भरता बढ़ाई है। एकाकीपन में रहना कठिन है। अत: कोई देश जो अपनी गतिकी को समझता है, उचित कार्यनीतियों के माध्यम से अपने पक्ष में ज्ञान अर्थव्यवस्था का प्रबंध करने में समर्थ होना चाहिए। शिक्षकों, वैज्ञानिकों, छात्रों, कार्यक्रमों, शैक्षिक संस्थाओं और सहयोग की सचलता के साथ उच्चतर शिक्षा के अंतर्राष्ट्रीयकरण तथा नेटवर्किंग को देश के शीर्ष गुणवत्ता वाले संस्थानों के साथ उपयुक्त रूप से बढ़ाने की आवश्यकता है ताकि मेधा को आकर्षित एवं बनाए रखा जा सके।

हम एक गतिशील ज्ञान आधारित समाज में रह रहे हैं। नई प्रौद्योगिकियां और चुनौतियां, अध्ययन के नए क्षेत्रों का जन्म देख रही हैं। हमारे उच्चतर शिक्षा संस्थानों को वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान के नए प्रभाव क्षेत्रों की पहचान करके इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए उनकी क्षमताओं का निर्माण करना चाहिए।

विचार विमर्श के लिए प्रश्न

- विश्व समुदाय में हम अपनी साफ्ट पावर कैसे बनाए रख सकते हैं?
- उच्चतर शिक्षा संस्थान, नए ज्ञान का सृजन करने और उसे देश के लाभ के लिए प्रयोग करने में अपने आप को कहां पाते हैं?
- हम शिक्षा के सभी दायरों में विश्व स्तरीय सतत/उभरते हुए नए ज्ञान को कहां स्थान देते हैं और हमारे पाठ्यक्रम के साथ उसे किस स्तर पर और कैसे समेकित किया जाना चाहिए?